चन्दामामा
जुलाई १९७८

चन्दामामा

जुलाई १९७८

ज़िन्दगी की सुहानी चीज़ों की तरह हमेशा ताज़ा, हमेशा सजीव!

Pond's
Dreamflower talc

flower talc Pon

पॉण्ड्स ड्रीमफ़्लावर टाल्क

जिसकी सुगंध आपको हमेशा से पसन्द है

Pond's

CP-1829

सिंहल भाषा में चन्दामामा का प्रकाशन

श्रीलंका के प्रधान मंत्री की शुभकामनाएँ

देश के लिए निर्विवाद रूप से प्राण तुल्य मानी जानेवाली युवा पीढ़ी को सही रास्ते पर ले जानेवाली पुस्तकों एवं पत्रिकाओं का संपादन करना नितांत आवश्यक है। अलावा इसके बच्चों के मानसिक विकास, मनोरंजन तथा उनका ज्ञानवर्द्धन करके उनके भीतर निहित उत्तम गुणों को सभी प्रकार से बढ़ावा देनेवाली रचनाओं का चयन करने में अत्यंत सावधानी बरतने की जरूरत है।

इस आशय की सिद्धि के लिए सिंहल भाषा में "अंबिलिमामा" मासिक पत्र का प्रकाशन करनेवाले "चन्दामामा" के प्रकाशकों का प्रयास प्रशंसनीय एवं अभिनंदनीय है।

इस प्रकाशन के द्वारा विभिन्न प्रकार की कहानियों, लोक कथाओं, पंच-तंत्र, हितोपदेश कथाएँ तथा महाभारत का अध्ययन करने का अवसर उपलब्ध कराना उल्लेखनीय है।

इसके द्वारा प्राप्त होनेवाले अन्य प्रयोजनों में भारत और सिंहल देश के बीच अनादि काल से चले आनेवाले सांस्कृतिक संबंधों को भली भांति हृदयंगम करने के साथ इन देशों के बीच शांति एवं सहयोग के संबंध दृढ़तर हो सकते हैं।

"अंबिलिमामा" के प्रकाशकों का मैं हृदयपूर्वक अभिनंदन करता हूँ और साथ ही यह आशा करता हूँ कि अत्यंत समुचित रूप से प्रकाशित होनेवाली यह पत्रिका हमारी युवा पीढ़ी के लिए प्रगतिशील और लाभदायक सिद्ध होगी।

आर. प्रेमदास

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "पिशाचों का ऋण" है। मनुष्य साधारणतः पाप-पुण्यों से संबंधित विश्वासों से अधिक प्रेरणा पाते हैं। पापी जन उनके परिणामों से बचने के लिए तीर्थयात्राएँ, दान व पूजा-अर्चना करते हैं। इसी प्रकार कतिपय कार्य करने पर पापों के शिकार हो दण्ड पाना पड़ता है, इस डर से कुछ लोग अपने स्वार्थ को भी त्याग देते हैं। "पिशाचों का ऋण" नामक कहानी के द्वारा पर्वत जान लेता है कि किसी के ऋणी बनकर मृत्यु को पाने पर पिशाच बन जाते हैं। इस भय से वह अच्छे मार्ग का अनुसरण करता है।

वर्ष : २० जुलाई १९७८ अंक : ११

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

अमर वाणी

अस्वाधीनं कथं दैवं
प्रकारैं रभिराध्यते,
स्वाधीनं समतिक्रम्य
मातरं पितरं गुरुम् ॥ १ ॥

[प्रत्यक्ष देवता माने जानेवाले माता-पिता तथा गुरु को त्यागकर अज्ञात देवताओं की आराधना कैसे करें ?"]

स्वर्गो धनं वा, धान्यं वा,
विद्याः पुत्रा स्सुखानि च,
गुरु वृत्यनु रोधेन
न किंचि दपि दुर्लभं ॥ २ ॥

[गुरुओं की आराधना करने से स्वर्ग, धन, धान्य तथा विद्या प्राप्त हो जाती हैं, उसके लिए असाध्य वस्तु कोई नहीं है।]

देव गंधर्व गोलोकान्
ब्रह्मलोकां स्तथापरान्
प्राप्नुवंति महात्मानो
माता पितृ परायणाः ॥ ३ ॥

[माता-पिता की सेवा करनेवाले महात्माओं को देव, गंधर्व, गोलोक तथा अंत में ब्रह्मलोक भी प्राप्त हो जाते हैं।]

[६०]

मंदविसर्प मेंढकों को ढोते हुए तरह-तरह के कौतुक करने लगा। मेंढ़कों का राजा प्रसन्न हो बोला—"मुझे तो गजारोहण तथा ब्रह्म का रथ भी यह आनंद प्रदान नहीं कर सकते।"

दूसरे दिन सर्प मेढ़कों को ढोते हुए बड़ी मंद गति के साथ चलने लगा। इसे देख जालपाद ने पूछा—"आज तुम तेजगति के साथ नहीं चलते, क्या बात है?"

सर्प ने उत्तर दिया—"प्रभु! भोजन के अभाव में कमजोरी आ गई है, उल्टे पीठ पर बोझ लदा है। इस कारण शीघ्र गति के साथ चल नहीं पाता हूँ।"

"तब तो तुम निम्न जाति के मेंढ़कों को खा डालो।" जालपाद ने सुझाया।

मंद विसर्प ने खुश होकर कहा—"ब्राह्मण ने भी यही शाप दिया था कि आप जैसे उच्च जाति के मेंढ़क मुझ से जो खाने के लिए कहें, मैं वही खाऊँ।" फिर क्या था, साँप बराबर मेंढ़कों को खाते अपनी खोई हुई शक्ति प्राप्त करने लगा।

थोड़े दिन बाद एक और बड़ा साँप उधर से आ निकला। विस्मय में आ गया और बोला—"दोस्त! ये मेंढ़क हमारे लिए प्राकृतिक भोजन है। ऐसी हालत में तुम्हें इस प्रकार उन्हें अपनी पीठ पर बिठाकर घूमना शोभा नहीं देता।"

"अबे, ये सारी बातें मैं जानता हूँ। घी पीकर अंधे जैसे अभिनय करनेवाले ब्राह्मण की भांति मैं भी मौक़े की प्रतीक्षा में हूँ।" मंदविसर्प ने जवाब दिया।

"वह कैसी क़हानी है?" साँप ने पूछा।

इस पर मंदविसर्प ने कहा—"प्राचीन काल में यज्ञदत्त नामक एक ब्राह्मण रहा

करता था। उसकी पत्नी दुश्चरित्रा थी। वह घी की बनी मिठाइयाँ लेकर अपने प्रियतम के यहाँ जाया करती थीं।

एक दिन ब्राह्मण ने अपनी पत्नी से पूछा—"अरी सुनो, ये मिठाइयाँ तुम किसके लिए बनाती हो? रोज तुम कहाँ जाती हो?"

ब्राह्मणी ने जवाब दिया—"यहाँ से थोड़ी-सी दूर पर देवी का मंदिर है। मैं दिन भर उपवास करके खीर और मिठाइयाँ देवीजी को नैवेद्य चढ़ाने के लिए मंदिर में जाती हूँ।"

ब्राह्मणी ने सोचा कि उस दिन वह मंदिर में जायेगी तो उसका पति यही सोचेगा कि वह रोज़ मंदिर में ही जाती है। यह विश्वास अपने पति को दिलाने के विचार से वह मंदिर पहुँची। लेकिन वह सीधे मंदिर में न जाकर स्नान करने के लिए तालाब में उतर पड़ी।

ब्राह्मणी का पति दूसरे रास्ते से मंदिर पहुँचा और देवी की मूर्ति के पीछे छिप गया। जल्द ही ब्राह्मणी स्नान समाप्त कर नैवेद्य के साथ मंदिर में पहुँची, देवीजी की अर्चना की, बोली—"हे देवीजी! मेरे पति के अंधे होने का उपाय क्या है?"

मूर्ति के पीछे छिपे ब्राह्मण अपना कंठ स्वर बदलकर बोला—"तुम रोज उसे घी की बनी मिठाइयाँ खिलाओगी तो शीघ्र ही वह अंधा हो जाएगा।"

उस दिन से ब्राह्मणी रोज अपने पति को घी की बनी मिठाइयाँ खिलाने लगी।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन ब्राह्मण अपनी पत्नी से बोला—"अरी, सुनो! मेरी आँखें दिखाई नहीं देतीं।"

"ओह, देवीजी की कैसी महिमा है!" ब्राह्मणी ने सोचा। यह समाचार उसने अपने प्रियतम को सुनाया और उसे एक दिन अपने घर निमंत्रित किया।

अंधे का अभिनय करनेवाले ब्राह्मण ने अचानक पीछे से अपनी पत्नी के प्रियतम पर लाठी चलाई जिससे उसका सर फूट गया और वह मर गया। इसके बाद

ब्राह्मण ने अपनी दुश्चरित्रा पत्नी की नाक काटकर उसे घर से निकाल दिया।

मंदविसर्प ने दूसरे साँप को यह कहानी सुनाकर कहा—"भाई, मैं भी ब्राह्मण की भांति मौक़े का इंतज़ार कर रहा हूँ।"

कालांतर में मंदविसर्प ने जालपाद के साथ सभी मेंढ़कों को निगल डाला।

यह वृत्तांत सुनाकर स्थिरजीवी ने अपने राजा से कहा—"राजन, मंदविसर्प ने जैसे सारे मेंढ़कों को समाप्त किया, वैसे मैं भी सभी उल्लुओं का निर्मूल कर पाया!"

इस पर मेघवर्ण बोला—"शायद इसीलिए बुजुर्ग कहते हैं कि समर्थ व्यक्ति अनेक विघ्न-बाधाओं के बावजूद भी अपने लक्ष्य को साध लेते हैं। जिसे हम शक्ति के बल पर साध नहीं सकते, उसे युक्ति के द्वारा साध लेते हैं।"

"यह बात सच है; लेकिन शक्ति के द्वारा हम शरीर का ही नाश कर सकते हैं। मगर युक्ति के द्वारा हम शत्रु के शरीर के साथ झूठे प्रचार के जरिये उसकी प्रतिष्ठा को भी धूल में मिला सकते हैं। राजन, अब आप निश्चितापूर्वक शासन कीजिए, पर याद रखिए, आप को अपनी प्रजा के वास्ते सदा काम करते रहना होगा! हम लोग श्रम किये बिना वृक्ष को नहीं गिरा सकते। कायर लोग कोई कार्य साध नही सकते। आज का काम कल पर न टालिए! छोटे से शत्रु अथवा खतरे के प्रति लापरवाही मत दिखाइये! जिस घर में साँपों का निवास होता है, क्या उस घर में हम निश्चित सो सकते हैं? हमें तो उनका संहार करना होगा! समय ही समस्त को निगल सकता है। राजा, मंत्री, सिंहासन, दरबार आदि काल के गर्भ में विलीन हो गये हैं। इसलिए प्राण के रहते आप अपनी प्रजा के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कीजिए!" यों स्थिरजीवी ने राजा को हितवचन सुनाये।

इसके बाद मेघवर्ण स्थिरजीवी की सलाहों का पालन करते शांतिपूर्वक राज्य करने लगा।

१९८. कवचवाली राक्षसी छिपकली

चित्र में दीखनेवाला कंकाल एक कवचधारी राक्षसी छिपकली का है। स्टेचिवान (चीन) राज्य में प्राप्त यह कंकाल इस वक्त चुंगकिंग अजायब घर में है। कवचधारी राक्षसी छिपकलियों के कंकाल संसार के अनेक स्थानों में प्राप्त हुए हैं। मगर एशिया में संपूर्ण कंकाल का प्राप्त होना यही पहली बार है। शाकाहारी इस राक्षसी छिपकली की लंबाई ७ मीटर है। ऊँचाई ढाई मीटर है। यह छिपकली २४ करोड़ वर्षों के पूर्व जीवित थी।
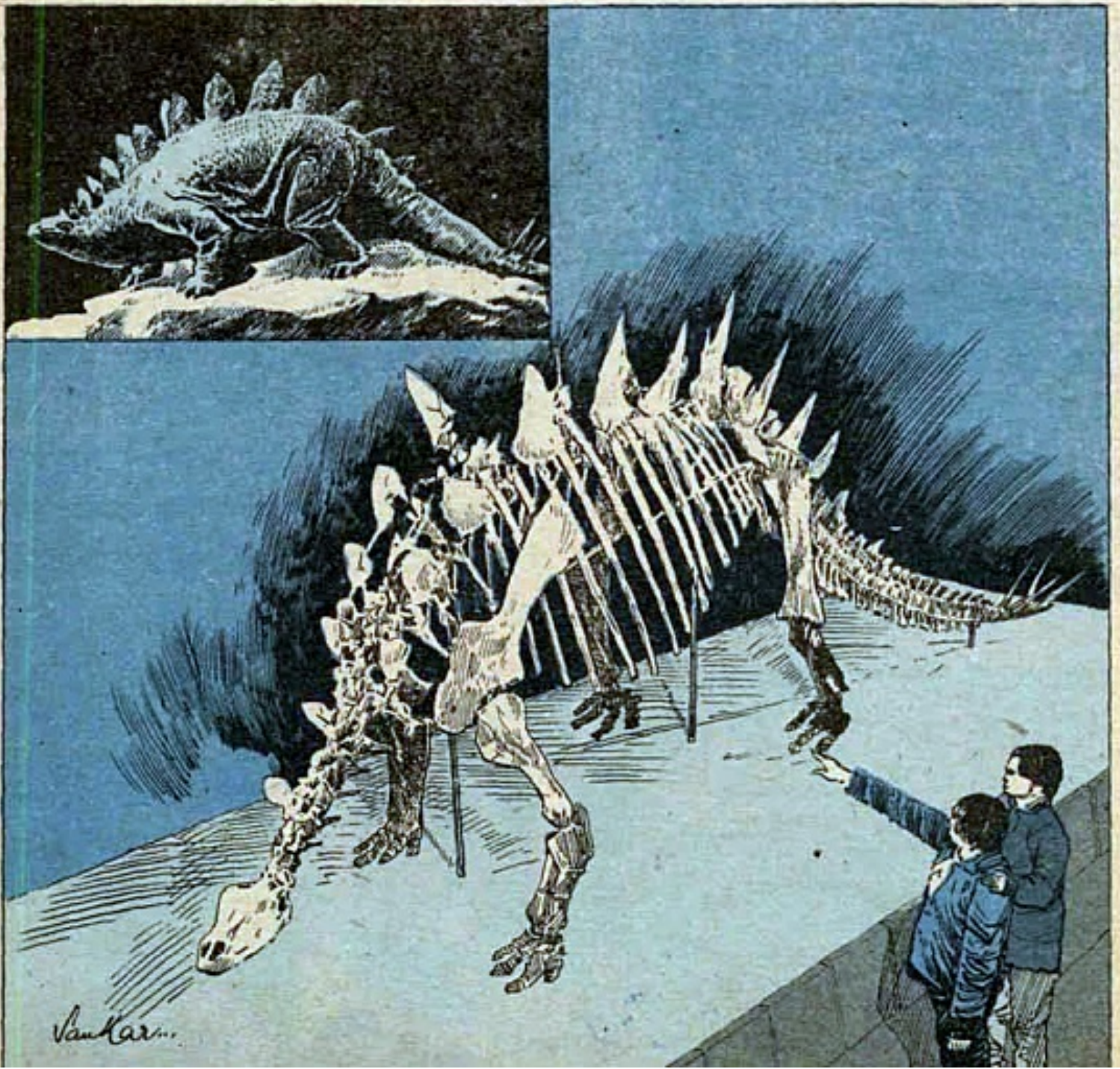
कन्या को छोड़ बाक़ी लोगों को अपने पत्थरवाले गदे की बलि देने जा रहा हूँ।"

नर वानर अभी तक पूर्ण रूप मे होश में न आया था। सिद्ध साधक ने सोचा कि उसका सेवक जलवृक ही उसे होश में ला सकता है। तब उसे पुकारकर बोला–"अरे वृकभट! तुम कहाँ हो? अपने पुराने दोस्तों के साथ कहीं भाग तो नहीं गये?"

दूसरे ही क्षण जलवृक आगे आया। सिद्ध साधक के चरणों के पास साष्टांग दण्डवत करके बोला–"सरकार! जलवृक राक्षसों की स्वामि भक्ति के सामने जन्म जात गुलाम भी किसी काम के नहीं होते! जलवृक कभी अपने वचन से मुकरते नहीं, मुझे क्या आज्ञा है?"

"अबे, जलवृक भट! में नहीं समझता कि नर वानर पर जो चोटें लगी हैं, वे प्राणघातक हैं! उसे उठाकर खड़ा कर दो।" सिद्ध साधक बोला।

"साहब, ऐसे जानवरों में मृत्यु का भय ही प्राण का संचार कर सकता है।" यों कहकर जलवृक भट नर वानर के निकट पहुँचा, बायें हाथ से उसका कंठ कसकर पकड़ लिया, पत्थर के गदे को उसके सिर पर टिकाकर चिल्ला उठा–"नर वानर! तुम्हारा सर फटने जा रहा है।"

दूसरे ही क्षण नर वानर उछलकर खड़ा हो गया। भयंकर गर्जन करते जलवृक भट को अपने हाथों से उठाकर दूर फेंक दिया। वह नीचे गिरने ही वाला था कि इस बीच कुछ सैनिकों ने उसे थाम लिया।

इसके बाद पुन: नर वानर जलवृक भट पर हमला करने को हुआ। तब सिद्ध साधक ने अपने शूल को उठाकर, समझाने के स्वर में बोला–"नर वानर, शांत हो जाओ! तुम दोनों मेरे सेवक हो! झगड़ा मत करो।" इसके उपरांत जलवृक राक्षसों के नेता को गैंड़े पर सवार हो भागने की दिशा में दृष्टि दौड़ाते हुए बोला–"अब उस दुष्ट को कैसे पकड़े?

[३०]

[माया सरोवर की ओर चलनेवाले लंगड़े मंगलवर्मा को वृक्ष की डालों में फंसा रथ-सारथी दिखाई दिया। उसके आर्तनाद सुनकर सिद्ध साधक और राजा कनकाक्ष भी वहाँ आ पहुँचे। उस वक्त जलवृकों को उकसाते गैंड़े पर सवार एक व्यक्ति आ निकला, तब पेड़ पर से नर वानर उस पर कूद पड़ा। बाद...]

जलवृक राक्षस अपने नेता को खतरे में फंसते देख दल बांधकर आये और अपने गदों से नर वानर को अंधा-धुंध पीटने लगे। राजा कनकाक्ष ने अपने सैनिकों को सावधान किया। सिद्ध साधक शूल उठाकर चिल्ला उठा—"जय महा काल की!" इसके बाद जलवृकों पर हमला करके उन पर शूल का प्रहार करने लगा।

दो-तीन मिनट तक भयंकर लड़ाई हुई, नर वानर पत्थर के गदों के प्रहार से शिथिल हो नीचे गिरने को हुआ। उसी वक़्त जलवृक राक्षसों का नेता अपने वाहन को चतुर्दिक घेरे हुए सैनिकों से आगे कुदवाकर गदा उठाये चिल्ला उठा—"अरे कमबख्त मानव! जानते हो, मैं कौन हूँ? माया सरोवर का सर्वाधिपति जलवृकनाथ हूँ। मैं इसी वक़्त पद्ममुखी नामक

क्या वह माया सरोवर तक पहुँच गया होगा? वह आखिर कितनी दूर पर है?"

वैद्यदेव देवशर्मा उसके समीप जाकर बोला–"सिद्ध साधक! माया सरोवर यहाँ से बड़ी दूर तो नहीं है, आप सब मेरे साथ चलिए।"

सिद्ध साधक ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया। देवशर्मा रास्ता दिखाते हुए आगे बढ़ा। राजा कनकाक्ष उसके साथ चलते हुए बोला–"शर्माजी, जल राक्षस केवल पद्ममुखी नामक कन्या को ही प्राणों के साथ छोड़ने की बात कहता है। इसका कारण मेरी समझ में नहीं आ रहा है।"

"महाराज, हमने जो सुना और देखा, इसके आधार पर लगता है कि माया सरोवर पूर्ण रूप से जल राक्षसों के अधीन हो गया है। पद्ममुखी माया सरोवरेश्वर की पुत्री है। जल राक्षसों के नेता का पद्ममुखी को प्राणों के साथ मुक्त करने के पीछे एक रहस्य छिपा हुआ है। उस राक्षस के एक पुत्र है। उसके साथ शायद पद्ममुखी का विवाह करना चाहता है।" देवशर्मा ने समझाया।

"मेरी पुत्री कांचनमाला के साथ भी एक और जल राक्षस विवाह करने की कोशिश कर सकता है!" जोश में आकर राजा कनकाक्ष बोला।

"महाराज! आप नाहक़ डरियेगा नहीं, उस माया सरोवर की ओर महासत्व जयशील तथा सरोवरेश्वर भी कभी के चले गये हैं।" देवशर्मा ने कहा।

देवशर्मा इस प्रकार राजा कनकाक्ष को हिम्मत बंधवा रहा था, तभी उधर जयशील अन्य लोगों के साथ मिलकर माया सरोवर पहुँचा। वह सरोवर अत्यंत विशाल था। उसके चारों तरफ़ ऊँचे-ऊँचे पहाड़ तथा जल तक फैले हुए भयानक जंगल भी थे।

जयशील अपनी तलवार से सरोवर के जल को हिलाते बोला–"ओह! तुम इसी सरोवर में निवास करते हो! कांचनमाला के अनुरोध पर तुमने मेरे कंठ में कसे फंदे

"क्या मैं अकेले इतने सारे जलवृक राक्षसों के साथ युद्ध करूं? मैं कोशिश करके देखूंगा! मैं ने तुम्हारे पिता राजा कनकाक्ष को वचन दिया है कि अपने प्राणों का मोह तक त्यागकर तुम्हें और तुम्हारे भाई को उन राक्षसों से बचाऊँगा। इसकी जिम्मेदारी मेरी है।" जयशील ने कहा।

जयशील के मुंह से ये शब्द सुनकर माया सरोवरेश्वर आगे आया, उसके दोनों हाथ पकड़कर बोला—"जयशील! तुम यह मत सोचो कि हिरण्यपुर के राजा के बच्चों का अपहरण करके इस सरोवर में लाकर मैंने बड़ा अपराध किया है। मैंने केवल राजकुमार को पकड़ लाने के लिए ही मकरकेतु को भेजा था। मगर वह मूर्ख था, इस कारण उसके साथ कांचनमाला को देख दोनों को बन्दी बनाकर उसने यहाँ पर भेजा। उस वक़्त राजभटों के हाथों में घायल हो मकरकेतु आप लोगों को दिखाई दिया और इस तरह वह और गड़बड़ी का कारण बना।"

को हटाया। क्या खूब है? लेकिन यह बताओ कि इस वक़्त हम लोग मित्र हैं या शत्रु?"

माया सरोवरेश्वर ने चिंतापूर्ण दृष्टि से कांचनमाला की ओर देखा। कांचनमाला लड़खड़ाते स्वर में बोली—"जयशील! यहाँ पर कोई शत्रु नहीं है। मैंने मकरकेतु के मुंह से सुना है कि आप के हाथ में जो तलवार है, उसे आप को महाकाल के किसी भक्त ने प्रदान किया है। उस तलवार की मदद से आप जलवृक राक्षसों का वध करके उनके बन्दी बने मेरे भाई कांचनवर्मा तथा मामाजी माया सरोवरेश्वर की पुत्री पद्ममुखी को बचाइये।"

"युवराजा का अपहरण करने में तुम्हारा उद्देश्य क्या है?" जयशील ने पूछा।

"इसमें कोई बहुत बड़ा राज नहीं है। मैं अपनी एक मात्र पुत्री पद्ममुखी का विवाह उसके साथ करके हिरण्यपुर भेजना

चाहता था। इसके बाद में इस सरोवर को छोड़ कहीं दूर जाने का विचार रखता था। मगर पद्ममुखी ने कांचनवर्मा के साथ विवाह करने से इनकार किया है।" माया सरोवरेश्वर ने असली बात खोल दी।

जयशील को उसकी बातें विश्वसनीय प्रतीत हुईं। उसने कांचनमाला की ओर देखा। कांचनमाला सरोवर के निकट जाकर एक कमल नाल को तोड़ लाई। उसका रस निछोड़कर जयशील के भाल पर बिंदी के रूप में रखकर बोली- "मामाजी का कहना सर्वथा सत्य है! मैं अब माया सरोवर का रहस्य खोल देती हूँ। इस सरोवर में उगे कमल नाल के रस को अगर कोई अपने भाल पर मल लेता है तो उन्हें जिंदगी भर पानी में जीने की शक्ति प्राप्त हो जाती है।"

"ओह, ऐसी बात है! तब तो मैं इसकी जांच करके देखता हूँ।" ये शब्द कहते जयशील उछलकर सरोवर के जल में कूद पड़ा।

किनारे पर स्थित माया सरोवरेश्वर, कांचनमाला और मकरकेतु इस आशा से उत्सुकतापूर्वक दो-तीन मिनट ताकते रहे कि जयशील जल पर तिर आएगा। मगर चार-पाँच मिनट के बीतने पर भी जब वह

जल से बाहर न निकला, तब कांचनमाला घबड़ाकर बोली-"आखिर जयशील को क्या हो गया है? कहीं जलवृक राक्षसों ने पानी के नीचे ताक में रहकर जयशील को बन्दी तो नहीं बनाया है?"

इसके दूसरे ही क्षण पानी के अंदर कोई हलचल मच गई। जयशील एक जवान जलवृक की गर्दन पकड़कर ऊपर आया, उसे किनारे की ओर घसीट लाया। उसे देखते ही मकरकेतु चिल्ला उठा- "ओह! हम जिसे ढूंढ रहे थे, वह हाथ लग गया है। यह जलवृकों के नेता का पुत्र है। हमारे अनुचर जो इसके पिता के हाथ बन्दी बने हैं, उनकी अगर कोई हानि

हुई हो तो हम इस युवक के टुकड़े-टुकड़े कर देंगे।"

"अरे दुष्ट! तुम जल में छिपकर हमारा वार्तालाप सुन रहे थे? तुम्हारा पिता वह दुष्ट जलवृक नाथ कहाँ है?" माया सरोवरेश्वर ने तलवार खींचकर कठोर स्वर में पूछा।

"मेरे पिताजी जंगल में स्थित किसी राजा और एक कापालिक का वध करने गये हुए हैं। वहाँ से लौटते ही तुम सब को काटकर चील और कौओं का आहार बना डालेंगे।" जवान राक्षस ने जवाब दिया।

"यह बात बाद को देखी जाएगी! मगर यह बताओ, इस वक़्त कांचनवर्मा और पद्ममुखी कहाँ पर हैं?" जयशील ने पूछा।

"उन्हें छिपाने का गुप्त प्रदेश सिर्फ़ मेरे पिताजी ही जानते हैं।" युवक राक्षस ने कहा।

उसी वक़्त दूर पर कोई हलचल मच गई। सब से आगे गैंड़े पर जलवृकनाथ, उसके पीछे जलवृकों का दल पत्थर के गदे उठाकर उस ओर बढ़ते हुए गरज उठे—"तुम लोग अपने अपने हाथियार फेंककर हमारे अधीन हो जाओ।"

यह धमकी सुनकर जयशील मकरकेतु से बोला—"मकरकेतु, जलराक्षस के पुत्र को तुम अपने जलग्रह की सूंड से ऊपर उठवा दो।"

इस पर मकरकेतु ने पुकारा—"हे जलग्रह, इस युवक को अपनी सूंड से ऊपर उठा दो।" मकरकेतु के मुँह से ये शब्द निकलने की देरी थी कि जलग्रह ने अपनी सूंड से युवक राक्षस को ऊपर उठाया।

इसके बाद अपनी ओर बढ़नेवाले जलवृकों से जयशील ने कहा—"अबे दुष्टो! अगर तुम लोगों ने हम पर हमला करने की कोशिश की, तो सब से पहले तुम्हारे नेता का पुत्र जलग्रह के पैरों के नीचे दबकर मर जाएगा!"

इतने में उनके पीछे से नर वानर पर सवार हो तेज़ी के साथ उसी दिशा में

बढ़नेवाले सिद्ध साधक ने चिल्लाकर कहा– "महाराज, आप अपने सैनिकों के साथ इन दुष्टों को घेर लीजिए! देखिये, वही जयशील है!" इन शब्दों के साथ वह उनके निकट पहुँचकर नर वानर से नीचे उतर पड़ा।

जयशील सिद्ध साधक को अपने साथ आये हुए लोगों का परिचय करा ही रहा था, तभी जलवृकों का नेता गैंड़े पर उठ खड़ा हुआ, पत्थर का गदा दूर फेंककर बोला–"मैं और मेरे अनुचर हथियार डालकर आत्म समर्पण कर रहे हैं। बन्दी बने मेरे पुत्र का वध न कीजिए! मेरे बन्दी बने हुए सभी लोगों को मैं अभी यहाँ पर बुलवा लेता हूँ!"

उसी समय राजा कनकाक्ष जयशील के समीप पहुँचा, कांचनामाला दौड़कर अपने पिता के पास पहुँची, उससे गले लगकर बोली–"पिताजी, मेरे मामा माया सरोवरेश्वर की कोई हानि न करो। जो कुछ हुआ, उसके लिए वे पछता रहे हैं।"

"माया सरोवरेश्वर की पुत्री पद्ममुखी आप की बहू बनते बनते रह गई!" जयशील हँसते हुए बोला।

"पद्ममुखी का दिल मैं जानती हूँ। वह देवशर्मा के साथ विवाह करना चाहती है!" कांचनमाला ने कहा।

उसी वक्त देवशर्मा जलवृक राक्षसों के नेता को बन्दी बनाकर कुछ सैनिकों के साथ जयशील के समीप आया और बोला– "जयशील, इस दुष्ट ने बन्दी बने पद्ममुखी तथा कांचनवर्मा को ले आने के लिए अपने अनुचरों को भेजा है। इसमें कोई धोखा-दगा तो न होगा न?"

"अगर कोई धोखा हुआ तो यह भी अपने पुत्र की भांति जलग्रह के पैरों के नीचे कुचलकर मर जाएगा!" जयशील ने कहा।

एक घड़ी के अन्दर चार जलवृक राक्षस कांचनवर्मा और पद्ममुखी को वहाँ पर ले आये। उन्हें देख माया सरोवरेश्वर

और राजा कनकाक्ष के आनंद की कोई सीमा न रही!

सिद्ध साधक ने महाकाल का जयकार करते पूछा–"मैंने यहाँ पर जो कुछ सुना, उसके अनुसार यह स्पष्ट है कि पद्ममुखी का विवाह देवशर्मा के साथ निश्चय हो गया है! पर राजकुमारी कांचनमाला की बात क्या है?"

राजा कनकाक्ष ने जयशील की ओर मुखातिब हो कहा–"मैंने घोषणा की थी कि अपहरण किये गये मेरे बच्चों को जो वीर लाकर मुझे सौंप देगा, उसे मैं आधा राज्य दूंगा। जयशील ने न केवल यह कार्य साध लिया, बल्कि वह महान वीर भी कहलाया।"

"कांचनमाला के लिए ऐसा वीर ही योग्य पति सिद्ध हो सकता है। क्यों कांचना? मैं ठीक कहा रहा हूँ न?" सिद्ध साधक ने कहा।

कांचनमाला लजाकर सिर झुकाये अपने पिता की ओट में जा खड़ी हुई। सिद्ध साधक ठठाकर हँस पड़ा और बोला–"अब जयशील का कांचनमाला के साथ और देवशर्मा का पद्ममुखी के साथ वैभवपूर्वक विवाह हिरण्यपुर में संपन्न होने हैं, अब आप सब लोग रवाना हो जाइए।"

"सिद्ध साधक! तुम्हारा क्या होगा?" जयशील ने पूछा।

"मैं इस माया सरोवर के किनारे थोड़े समय तक महा काल की उपासना करूँगा। यहाँ पर जो भी जलवृक राक्षस और जंगल के नर भक्षी लोग हैं, वे सब मेरे सेवक हैं।" इन शब्दों के साथ सिद्ध साधक ने अपना शूल ऊपर उठाया।

इसके बाद जयशील, राजा कनकाक्ष तथा माया सरोवरेश्वर अपने अपने बच्चों व अनुचरों के साथ वहाँ से निकल पड़े। वे थोड़ी ही दूर गये थे, तभी जलवृक राक्षस तथा नर भक्षी दौड़े आये और सिद्ध साधक को घेरकर उसके जयकार करते नाचने लगे। (समाप्त)

पिशाचों का ऋण

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मैं नहीं जानता कि आप यह जो श्रम उठा रहे हैं, वह स्वार्थ से प्रेरित होकर करते हैं या निस्वार्थ भाव से। मगर प्राचीन काल में पर्वत नामक एक व्यक्ति ने निस्वार्थ भाव से किसी अपरिचित व्यक्ति की सहायता की है। श्रम को भुलाने के लिए मैं आप को उसकी कहानी सुनाता हूँ, सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में एक छोटे से गाँव में पर्वत नामक एक निर्धनी व्यक्ति अपनी पत्नी के साथ निवास करता था। उसकी झोंपड़ी से लगकर एक उजड़ी हुई दूसरी झोंपड़ी थी। एक दिन उस झोंपड़ी में एक बूढ़े ने आकर डेरा

बेताल कथाएँ

डाला। पर्वत ने भांप लिया कि वह बूढ़ा बीमार है और उसका अपना कहनेवाला कोई नहीं है। उस बूढ़े की कोई मदद भी करना चाहे तो वह असहाय था।

यह बात जब पर्वत ने अपनी पत्नी को सुनाई, तब वह तुनककर बोली–"वाह, अपना कोई भरोसा नहीं, दूसरों की मदद करने चले! उसने न मालूम किसी जन्म में कोई पाप किया होगा, उसे इस जन्म में भोग रहा है! आज या कल वह अपनी जान से हाथ धो बैठेगा, तब उसकी सारी मुसीबतें दूर हो जायेंगी।"

पर्वत को लगा कि उसकी पत्नी की बातों में कोई असत्य नहीं है। मगर वह बूढ़ा रात भर खांसता रहा जिससे पर्वत की नींद में खलल पड़ गई। पर्वत ने कई बार सोचा भी कि बूढ़े का गला दबाकर उसे मार डाले तो वह इन मुसीबतों से छुटकारा पा जाएगा। इससे वह आराम से सो सकेगा, साथ ही शायद उसे पुण्य की प्राप्ति होगी।

एक दिन रात को बूढ़ा बराबर खांसता रहा, पर्वत किसी पेड़ के नीचे सोने का विचार करके झोंपड़ी से बाहर निकला। उसे एक विचित्र आकृति दिखाई दी।

पर्वत ने पूछा–"तुम कौन हो?"

"मैं पिशाच हूँ!" उस व्यक्ति ने जवाब दिया।

ये शब्द सुनते ही पर्वत कांप उठा। उसने पूछा–"तुम को क्या चाहिए?"

"इस गठरी में धन भरा हुआ है। तुम इसे बूढ़े के हाथ सौंप दो। उसे किसी शहर में ले जाकर इस धन से उसका इलाज करा दो।" पिशाच ने कहा।

पिशाच की यह परोपकार वृत्ति देख पर्वत का डर जाता रहा। उसने पूछा–"तुम्हें इस बूढ़े के प्रति ऐसी सहानुभूति क्यों? कोई भी ज़िंदा व्यक्ति इस बूढ़े की बिलकुल परवाह तक नहीं कर रहा है!"

पिशाच ने यों समझाया–"तुम कल्पना तक नहीं कर सकते कि यह बूढ़ा कैसे

महान व्यक्ति है! एक जमाने में यह बड़ा धनी और दाता भी था। मैं अपने बचपन में एक लखपति के यहाँ नौकरी करता था। एक बार मेरे मालिक ने मेरे हाथ दस हज़ार सिक्के देकर शहर से कुछ क़ीमती चीज़ें खरीद लाने के लिए मुझे भेजा। मैं शहर में जाकर एक सराय में ठहरा। उस रात को मैं अपना सारा धन खो बैठा। मेरे मालिक का मुझ पर अपार विश्वास था। अगर मैं घर लौटकर मालिक से यह बताता कि चोरों ने मेरा धन लूट लिया है, इससे मेरी असावधानी साबित हो जाती! अगर मेरे मालिक मेरी सच्ची बातों पर यक़ीन न करते तो मेरी तौहीन हो जाती। इसलिए मैंने नदी में कूदकर आत्महत्या करनी चाही, मगर कुछ लोगों ने आकर मुझे बचाया और पूछा कि तुम क्यों मरना चाहते हो? इस पर मैंने सच्ची बात बताई। फिर भी किसी ने मेरे प्रति सहानुभूति नहीं दिखाई। मगर एक युवक मुझे अपने घर ले गया, गुप्त रूप से मेरे हाथ दस हज़ार रुपये दिये और समझाया कि इतना सारा धन लेकर सराय में ठहरना उचित नहीं है, इसलिए अगली बार शहर में आये तो उन्हीं के घर ठहर जाऊँ! इसके बाद आवश्यक माल खरीदवाकर मुझे घर
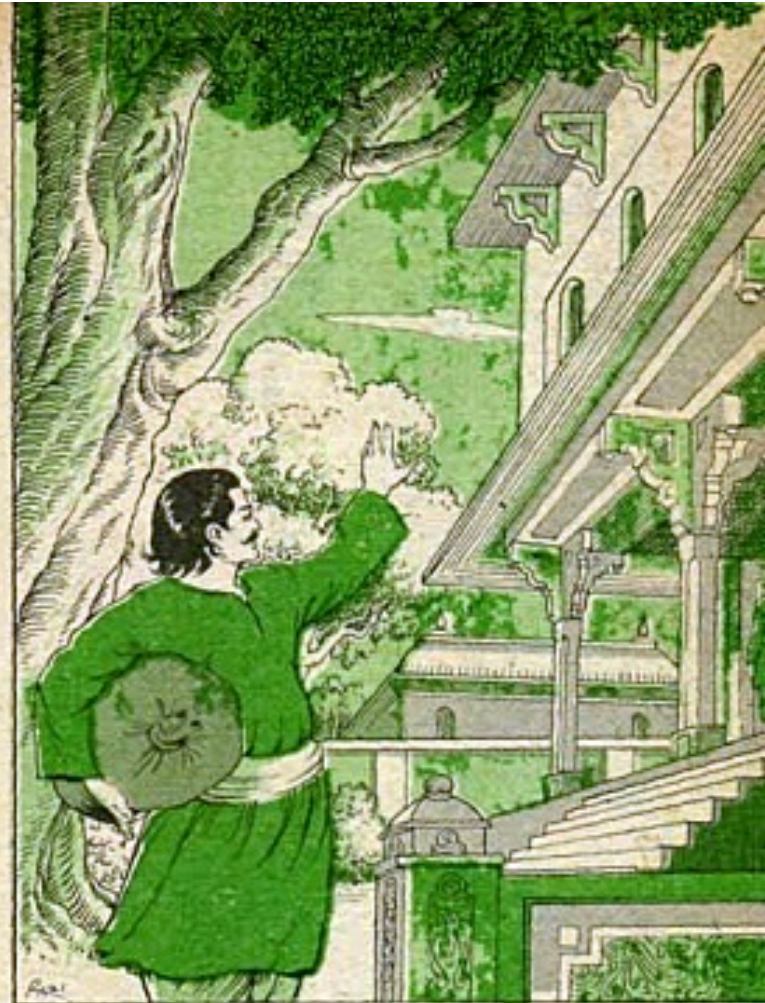
भिजवा दिया। वही युवक यह बूढ़ा है। इसके बाद मैंने अपनी ज़िंदगी में कभी उन्हें नहीं देखा। हाल ही में मैं मरकर पिशाच बन गया। मुझे मालूम हुआ कि वह बूढ़ा दरिद्र और असहाय बन गया है। इसलिए तुम यह धन बूढ़े के हाथ सौंपकर मुझे ऋण से मुक्त करो, तुम्हारा पुण्य होगा!" यों समझाकर वह पिशाच धन की गठरी पर्वत के हाथ सौंपकर अदृश्य हो गया।

पर्वत ने धन की गठरी ले जाकर झोंपड़ी के अन्दर रख दी। इतने में किसी ने उसके दर्वाजे पर दस्तक दी। पर्वत ने किवाड़ खोलकर देखा, सामने एक पिशाच खड़ा हुआ था।

"तुम फिर क्यों आये?" पर्वत ने पिशाच से पूछा।

"फिर आना कैसे? मैं तो अभी आ रहा हूँ! मैं इस बगल की झोंपड़ी में स्थित बूढ़े का ऋणी हूँ। तुम यह धन उस बूढ़े के हाथ देकर शहर में इलाज कराने को कह दो!" यों कहते पिशाच ने धन की एक और गठरी पर्वत के हाथ थमा दी।

पर्वत के मन में कुतूहल जाग उठा। उसने पूछा-"तुम उस बूढ़े के ऋणी कैसे बन गये हो?"

दूसरे पिशाच ने यों समझाया-"मैं अपने परिवार के बोझ से दबा हुआ था। एक बार मेरी पाँच साल की पुत्री की तबीयत खराब हो गई। मेरी बेटी की बीमारी का इलाज कराने मैं अपने परिवार को लेकर शहर पहुँचा। वहाँ पर मैं एक नामी वैद्य से मिला। उसने बताया कि लड़की का इलाज का खर्च क़रीब पाँच-छे हज़ार रुपये बैठेगा। इसलिए मैं अपनी बेटी के जीने की आशा छोड़ रोते बैठा रह गया। हमारे पड़ोस में स्थित एक अधेढ़ उम्र का व्यक्ति मेरे पास आया, उसने समझाया कि लड़की के प्राण से धन का महत्व ज़्यादा नहीं होता और उसने मेरे हाथ में दस हज़ार सिक्के दे दिये। मैंने छे महीने तक लड़की का इलाज कराया। लड़की न केवल बच गई, बिलकुल स्वस्थ भी हो गई। मगर उस अधेढ़ उम्र के व्यक्ति का ऋण मैं चुका न पाया। इस कारण मैं दूसरे जन्म में पिशाच बन गया। मुझे अब मालूम हुआ कि मेरी सहायता करनेवाला व्यक्ति यही बूढ़ा आदमी है। इसलिए मैं अपने ऋण से मुक्ति पाकर पिशाच के जन्म से मुक्त होने के लिए यहाँ पर आया हूँ।"

इस प्रकार दूसरा पिशाच भी धन की गठरी पर्वत के हाथ देकर गायब हो गया।

इसके बाद पर्वत ने दो गठरियाँ भीतर रख दीं, अपनी पत्नी को जगाकर बोला-

"अरी सुनो तो! तुमने क्या कभी अपनी ज़िंदगी में इतना धन देखा था?" इन शब्दों के साथ उसने दोनों गठरियाँ अपनी पत्नी को दिखाईं। उसने अपने पति के द्वारा जान लिया कि वह धन कैसे प्राप्त हुआ है, तब बोली–"सुनो, यह धन बूढ़े को बचा नहीं सकता! उसकी ज़िंदगी अंतिम घड़ी में है। हमें तो और बच्चों को जन्म देकर उन्हें पालना होगा! इसलिए यह धन हम्हीं रख लेंगे!"

"नहीं, यह धन हम बूढ़े को ही सौंप देंगे!" पर्वत ने समझाया।

"तब तो एक गठरी हम बूढ़े को देंगे और दूसरी हम रख लेंगे!" पर्वत की पत्नी ने समझाया। पर्वत को भी लगा कि पत्नी की सलाह के मुताबिक़ करना उचित होगा! मगर वह बड़ी देर तक इस बारे में सोचता रहा, तब बोला–"नहीं, ये दोनों गठरियाँ हम बूढ़े को ही दे देंगे।" यों अपना निर्णय सुनाकर दूसरे दिन बूढ़े को दोनों गठरियाँ सौंप दी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"पर्वत के इस व्यवहार का कारण क्या उसका निस्वार्थ भाव है? या पिशाचों का धन लेने से वह डर गया था? इस प्रश्न का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आपका सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा!"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"ऐसी बात नहीं है! असली बात तो यह है कि एक व्यक्ति के ऋणी होने के कारण दो आदमी मरने के बाद पिशाच बन गये थे। यह बात जानने के बाद उसे लगा कि उसे पिशाचों ने जो धन दिया है, वह उसी बूढ़े का है। इसलिए यदि वह उस धन का उपयोग करेगा तो वह भी बूढ़े का ऋणी बन जाएगा और उसे पिशाच का जन्म धारण करना होगा। इसलिए पर्वत उस धन का उपयोग करने से डर गया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
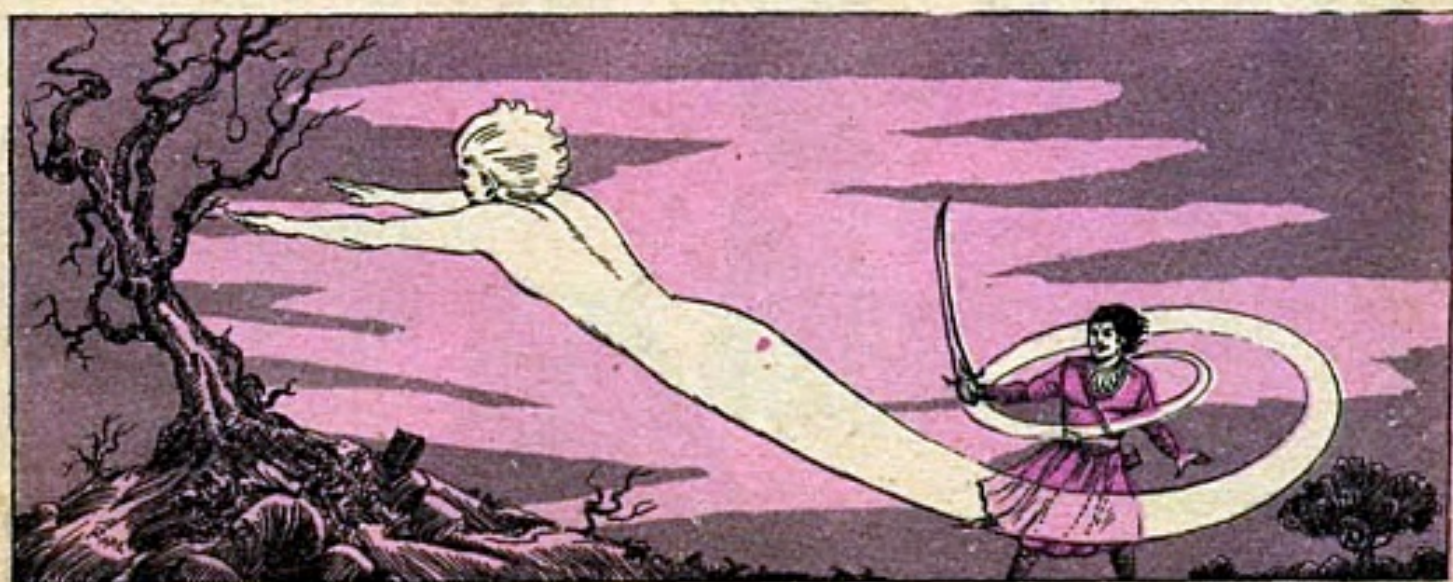
वही नीति

जुम्मन दास एक दूध के व्यापारी का पुत्र है। गुरुनाथ नामक एक किसान ने अपनी पुत्री विन्ध्या का विवाह जुम्मन दास के पुत्र के साथ किया। अपनी सारी जायदाद दामाद के नाम लिखकर उसके आश्रय में अपने शेष दिन बिताने लगा।

जुम्मन दास के घर कुछ ऐसी भैंसें थीं, जो दूध नहीं देती थीं। फिर भी उनका पालन-पोषण करता रहा। इसे देख विन्ध्या बोली–"बूढ़ी भैंसों का पालन करना बेकार है न? उन्हें कसाई के हाथ बेचने पर थोड़े-बहुत रुपये हाथ लग जायेंगे!" पर जुम्मनदास ने समझाया–"एक समय इन्हीं भैंसों ने हमारा पालन-पोषण किया है। अब उनका पोषण करना हमारा कर्तव्य है न?" लेकिन विन्ध्या ने नहीं माना।

दूसरे दिन जुम्मनदास ने अपने मामा से कहा–"मामजी, अब आपका पालन-पोषण करना हमारे लिए बेकार है। इसलिए कृपया आप अपना कोई रास्ता ढूंढ़ लीजिए।" ये बातें सुन विन्ध्या तुनक कर बोली–"तुम यह क्या कहते हो? पिताजी की सारी संपत्ति लेकर अब इन्हें घर से भगा देते हो? यह तुम्हारी कैसी नीति है?"

"कल तुमने मुझे जिस नीति का पाठ पढ़ाया, वही नीति है यह।" जुम्मन दास ने समझाया। इसके बाद विन्ध्या ने भैंसों को बेचने की बात कभी नहीं उठाई!

अकिल दण्ड

चियांग को चुंग-वान की कंजूसी कभी पसंद न आई। एक बार चियांग मनोरंजन की 'खिलौनेवाली पेटी' किराये पर ले आया। इसे देख चुंग-वान ने वह पेटी एक दिन के लिए माँगी।

इस पर चियांग बोला—"तुम तो पक्के कंजूस हो! इसके बदले में अगर तुम मेरी भी कोई मदद देने को तैयार हो जाओगे तभी में यह पेटी तुम्हें देखने दूंगा। मगर मेरी शर्त यह है कि तुम्हें मेरे ही घर में यह पेटी देखनी होगी।"

चुंग-वान ने चियांग की शर्तों को मान लिया। उसने चियांग के घर जाकर वह पेटी देख ली।

इसके बाद एक दिन चियांग को अपनी जमीन समतल बनाने के लिए दुरमुस की ज़रूरत पड़ी। चुंग-वान के पास एक दुरमुस था। पर वह किसी को देता न था। लेकिन उसने वादा किया था कि मनोरंजनवाली पेटी देखने के उपलक्ष्य में चियांग की भी वह कोई न कोई मदद करेगा। इसलिए दुरमुस लेने के लिए चियांग चुंग-वान के घर पहुँचा।

उस वक़्त चुंग-वान अपने घर पर ही था। चियांग ने पूछा—"चुंग-वान! मुझे एक दिन के लिए तुम्हारे दुरमुस की जरूरत आ पड़ी है। क्या दे सकते हो?"

"क्यों नहीं? जरूर दूंगा! मगर तुम्हें उसे मेरे ही घर पर देखना होगा!" चुंग-वान ने उत्तर दिया।

चियांग को चुंग-वान का व्यवहार बड़ा बुरा लगा। उसने चुंग-वान को उसकी कंजूसी का अच्छा सबक़ सिखाना चाहा।

दिन बीतते गये। चुंग-वान के पास एक बकरी थी। उसने हाट में ले जाकर अपनी बकरी बेचनी चाही। लेकिन हाट में

मंसाराम शर्मा

जाना हो तो उसे एक नहर पार करना था। नहर पार करनेवालों को चियांग का बेड़ा काम देता था। क्यों कि चियांग का पेशा बेड़ा चलाना था। चियांग नहर पार करने का किराया चाहे आदमी हो या जानवर, एक एक सिक्का लिया करता था।

चुंग-वान की बकरी ब्याने को तैयार थी, उस हालत में हाट में ज़्यादा क़ीमत पर बकरी बेचने के ख़्याल से चुंग-वान हाट की ओर चल पड़ा। उसने अपने तथा अपनी बकरी के लिए दो सिक्के किराया देकर चियांग से रसीद ले ली।

मगर बकरी जब नहर पार कर रही थी, तब उसने एक बच्चा दिया। इसे देख चुंग-वान को बड़ी ख़ुशी हुई। क्योंकि अगर बेड़े पर सवार होने के पहले ही बकरी ब्याती तो उसे बकरी के बच्चे के लिए भी एक और सिक्का किराया देना पड़ता।

ज्यों ही बेड़ा नहर को पार कर गया, त्यों ही चुंग-वान बकरी के बच्चे को उठाकर बकरी को खींचते बेड़े से उतरने को हुआ। इस पर चियांग ने चुंग-वान से बकरी का बच्चा खींच लिया और चुंग-वान को सिर्फ़ बकरी के साथ उतर जाने को कहा। चुंग-वान चिल्लाकर कहने लगा कि बकरी का बच्चा उसी का है। मगर चियांग ने साफ़ कह दिया कि बकरी का बच्चा उसी का है। दोनों के इस झगड़े को देख कई लोग वहाँ पर इकट्ठे हो गये। चुंग-वान ने सब से पूछा कि उसके प्रति न्याय करें।

चियांग ने उसे समझाया–"तुम अपनी रसीद में देख लो, उसमें तुम्हारे और तुम्हारी बकरी का ही किराया जमा है।"

इस पर सबने चियांग के ही कथन का समर्थन किया। क्योंकि सभी लोग चुंग-वान की कंजूसी से भली भांति परिचित थे। सबने यही सोचा कि चुंग-वान को ऐसा उचित दण्ड मिलना ही चाहिए। तब क्या था, चियांग बकरी के बच्चे को लेकर चुपचाप अपने रास्ते चला गया।

भोले लोग

श्रीपुर के निवासी सब भोले-भाले थे। वे अपने गाँव के पटवारी साहब की हर बात को वेद के समान मानते थे। उनके मित्र पटेल की बात पर भी उनका गहरा विश्वास था। पटवारी साहब गाँववालों से कहा करते थे कि उन्हें रोज सपने में महाराजा दर्शन देते हैं और वे उनकी सलाह का अक्षरश: पालन करते हैं।

एक दिन पटवारी साहब को उदास बैठे देख कुछ लोगों ने उनसे इसका कारण पूछा।

इस पर पटवारी साहब ने आँसू पोंछते हुए कहा–"मुझे रोज सपने में जो राजा दिखाई दे रहे थे, वे कल रात को सपने में दिखाई नहीं दिये। शायद वे मर गये होंगे।"

थोड़ी ही देर में महाराजा की मृत्यु का समाचार आग की तरह सारे गाँव में फैल गया। लोग चौपाल के पास पहुँचकर अपना शोक प्रकट करने लगे। यह बात मालूम होते ही पटेल साहब वहाँ पहुँचे, बोले–"भाइयो, तुम लोग रोते क्यों हो? महाराजा का देहांत नहीं हुआ है। वे कल रात भर सपने में मुझे दिखाई दे रहे थे। इसलिए शायद पटवारी साहब के सपने में दिखाई देने का उन्हें मौक़ा नहीं मिला होगा!" इस पर सभी लोग अपने राजा को जीवित समझकर प्रसन्न हो उठे।
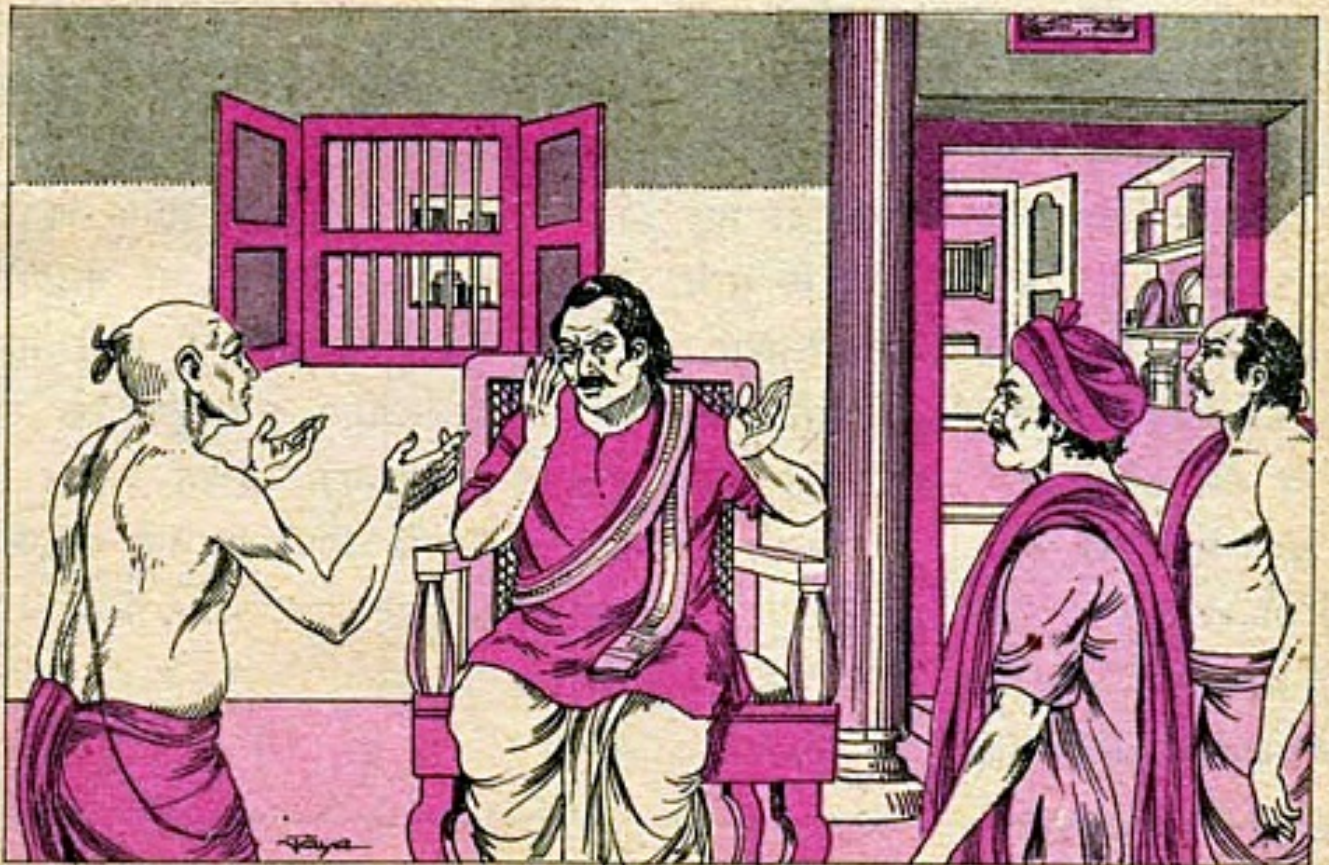
परलोक की यात्रा

निरंजन नामक व्यापारी ने अनेक अन्याय व पाप करके लाखों रुपये कमाये। जब वह बूढ़ा हुआ तब उसे पाप का भय सताने लगा। उसने जिन लोगों को धोखा दिया था, वे सपने में भूतों की तरह दिखाई दिये और वे उसके दिल को परेशान करने लगे। इससे तंग आकर निरंजन ने सन्यास लेने का निश्चय कर लिया और अपने परिवार को अपना निर्णय सुनाया।

"आप के बिना यह घर-गृहस्थी मुझे किस काम की है? मैं भी आप के साथ चलती हूँ?" निरंजन की पत्नी ने कहा।

"मेरे लखपति पुत्र को सन्यासी बनते देख मैं कैसे देखती रह सकती हूँ? मुझे भी अपने साथ लेते चलो।" निरंजन की बूढ़ी माँ बोली।

"आप सब लोग एक साथ घर-बार छोड़कर चले जायेंगे तो क्या मैं अकेले इतने बड़े मकान में कैसे रह सकता हूँ? मैं भी आप लोगों के साथ चलता हूँ।" पुत्र ने भी अपना निर्णय सुनाया।

अपने प्रति परिवारवालों का प्रेम देख निरंजन बड़ा खुश हुआ और बोला–"तब तो एक काम करेंगे! मैं कहीं नहीं जाऊँगा, गाँव के बाहर एक मठ बनाकर उसमें भजन-पूजा करते अपने शेष दिन बिताऊँगा। इससे तुम लोगों के साथ रहने का मौक़ा भी मिलेगा और साथ ही अनेक दिनों की मेरी इच्छा की पूर्ति भी हो जाएगी।"

यह सुझाव परिवार के सभी सदस्यों को अच्छा लगा। एक हफ़्ते के अन्दर गाँव के बाहर एक आश्रम बनकर तैयार हुआ। उसमें मिष्टान्न बना सकनेवाले रसोइये और दिन-रात भजन करने के लिए किराये के आदमी नियुक्त हुए। खर्च तो काफी हो रहा था, इस बात का निरंजन

विमल मल्होत्रा

को दुख जरूर था, मगर यह सोचकर उसने अपने को संभाल लिया कि आखिर यह सब उसी के वास्ते किया जा रहा है।

धीरे-धीरे आश्रम का यश सारे गाँव में फैल गया। बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी लोग शाम तक आश्रम में हाज़िर होने लगे। निरंजन का मन चाहे जैसा भी रहा हो मगर गाँववाले भक्ति-भाव में डूब गये।

एक दिन रात को मिष्टान्न खाकर निरंजन थककर सो गया। उसने नींद में एक सपना देखा। सपने में भगवान ने प्रत्यक्ष होकर बताया–"निरंजन, तुमने अनायास ही इस गाँव का बड़ा उपकार किया है। गाँव में मेरे भक्तों की संख्या तुमने बढ़ा दी है। इसके फल स्वरूप मैं तुम्हें वैकुंठ में बुलवा लेने के लिए कल ही तुम्हारे पास एक विमान भेज दूंगा। उसमें बैठकर तुम मेरे पास चले आओ।"

ये शब्द सुनने पर निरंजन के आनंद की कोई सीमा न रही। उसने अपनी पत्नी को बुलाकर कहा–"तुमने आज तक मेरे पापों में हिस्सा बांट लिया है, इसलिए तुम भी मेरे साथ वैकुंठ में चले आओ।"

"मैं तो आप के साथ चलने को तैयार हूँ, लेकिन मैं हमारे पुत्र को छोड़कर पल भर भी नहीं रह सकती। उसको भी हम अपने साथ ले चलेंगे।"

पुत्र ने कहा–"मैं अकेले चलने को तैयार नहीं हूँ, मेरे साथ मेरी पत्नी भी चलेगी।"
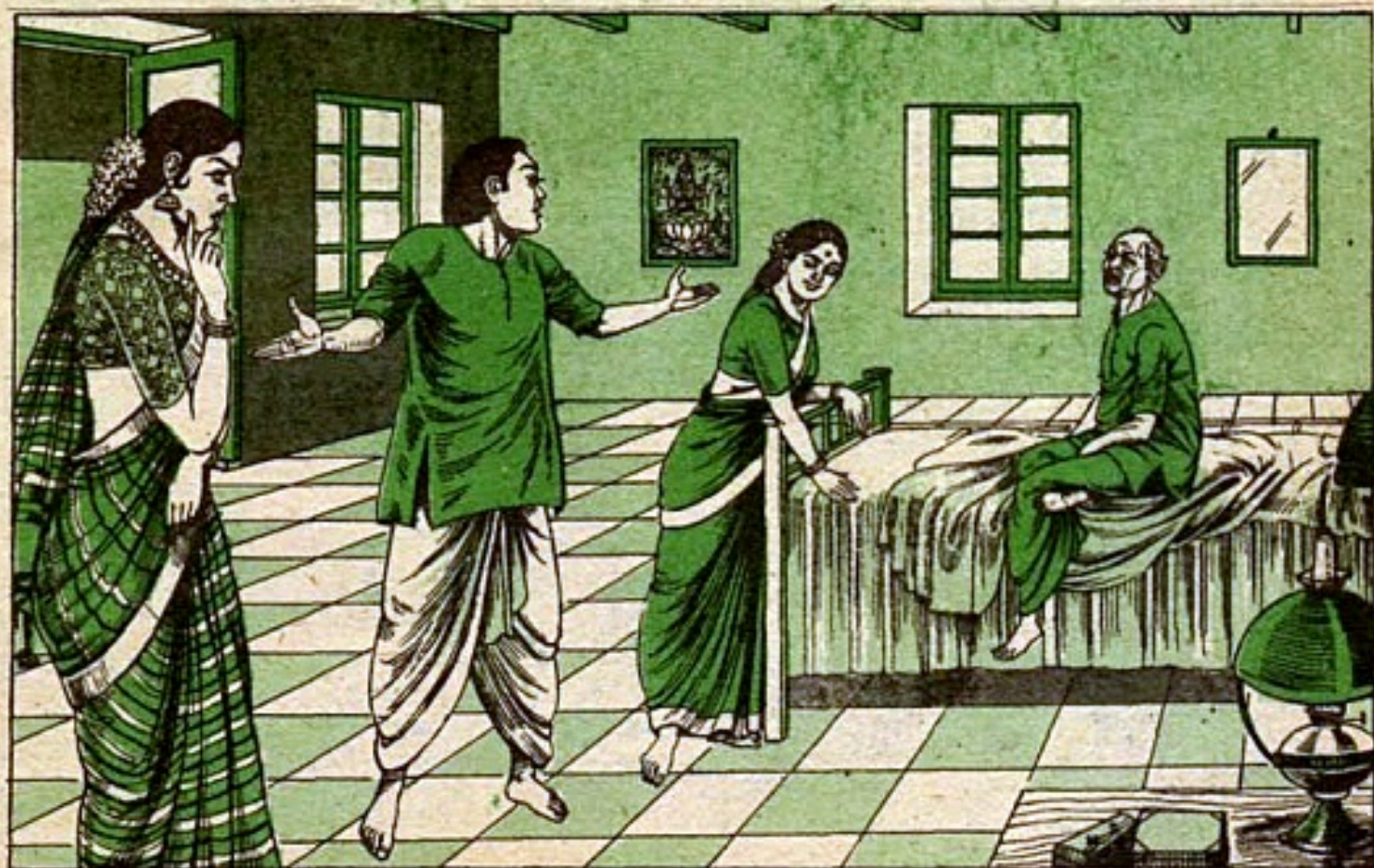
इतने लोगों के चलते उसकी बूढ़ी माँ यहाँ पर क्या करेगी? यों विचार कर निरंजन ने अपनी बूढ़ी माँ को भी बुलाया।

"बेटा, तुम अपने सहोदर भाई को छोड़ वैकुंठ जाने को कैसे तैयार हो गये हो? मेरेलिए तुम दोनों समान हो, उसको भी बुलवा लो।" बूढ़ी माँ ने निरंजन को समझाया।

लाचार होकर निरंजन ने अपने छोटे भाई के घर जाकर उसे भी वैकुंठ के लिए निमंत्रण दिया। फिर क्या था, निरंजन के छोटे भाई के साथ उसका सारा परिवार चल पड़ा।

प्रातःकाल के समय आश्रम में एक विमान आकर उतरा। उसमें निरंजन के साथ उसकी माँ, पत्नी, बेटा-बहू, छोटा भाई और उसका परिवार भी सवार हुआ। दूसरे ही क्षण विमान ऊपर उड़ा।

निरंजन के मन में यह शंका पैदा हुई—"विमान में एक साथ इतने सारे लोग बैठ गये हैं; क्या यह सबको ढो सकता है?" इतने में विमान बोझ के कारण इधर-उधर डोलने लगा।

फिर क्या था? निरंजन चिल्ला उठा—"मैंने जो सोचा था, वही हुआ! लगता है कि यह विमान एक ही आदमी को ढो सकता है! तुम लोग मुझ अकेले को जाने दो, बाक़ी लोग नीचे कूद पड़ो।"

ऐसा मालूम हो रहा था कि विमान किसी भी क्षण उलट सकता है!

लेकिन एक भी आदमी विमान से नीचे कूद नहीं पड़ा, उल्टे वे चिल्ला उठे—"क्या तुम हम सबको यहीं छोड़ अकेले ही वैकुंठ जाना चाहते हो?" यों कहते सबने निरंजन को कसकर पकड़ लिया और ज़बर्दस्ती उसे विमान से नीचे ढकेल दिया।

आसमान से नीचे गिरनेवाले निरंजन को भूत-पिशाचों ने पकड़ लिया।

बस! एक दम चीखकर निरंजन उठ बैठा। इसे सपना समझने में निरंजन को काफी समय लगा।

अनोखा सौदा

जीवन देहाती था और भोला भी। वह थोड़े से रुपये लेकर शहर में कोई चीज़ खरीदने चल पड़ा। यह बात मालूम होने पर उसके एक दोस्त ने सलाह दी–"शहर के व्यापारी धोखा देते हैं। तुम जो भी चीज़ ख़रीदना चाहोगे, उसे दूकानदार जो दाम बताएगा, तुम आधे दाम पर सौदा करो।"

शहर पहुँचकर जीवन सारी दूकानों को पार करते आखिर एक छाते की दूकान पर पहुँचा और छाते का भाव पूछा। दूकानदार ने दस रुपये दाम बताया। झट जीवन ने पूछा–"क्या पाँच रुपये में दोगे?"

जीवन को निरा देहाती समझकर दूकानदार ने उसका मजाक़ उड़ाना चाहा। उसने कहा–"छै रुपये में ले लो।"

झट जीवन ने पूछा–"क्या तीन रुपये में दोगे?"

"दाम देने की ज़रूरत नहीं, मुफ़्त में ले लो।" दूकानदार ने कहा।

"तब तो क्या दो छाते दोगे?" जीवन ने पूछा।

"अब तुम जा सकते हो!" दूकानदार ने जीवन को डाँटकर भेज दिया।
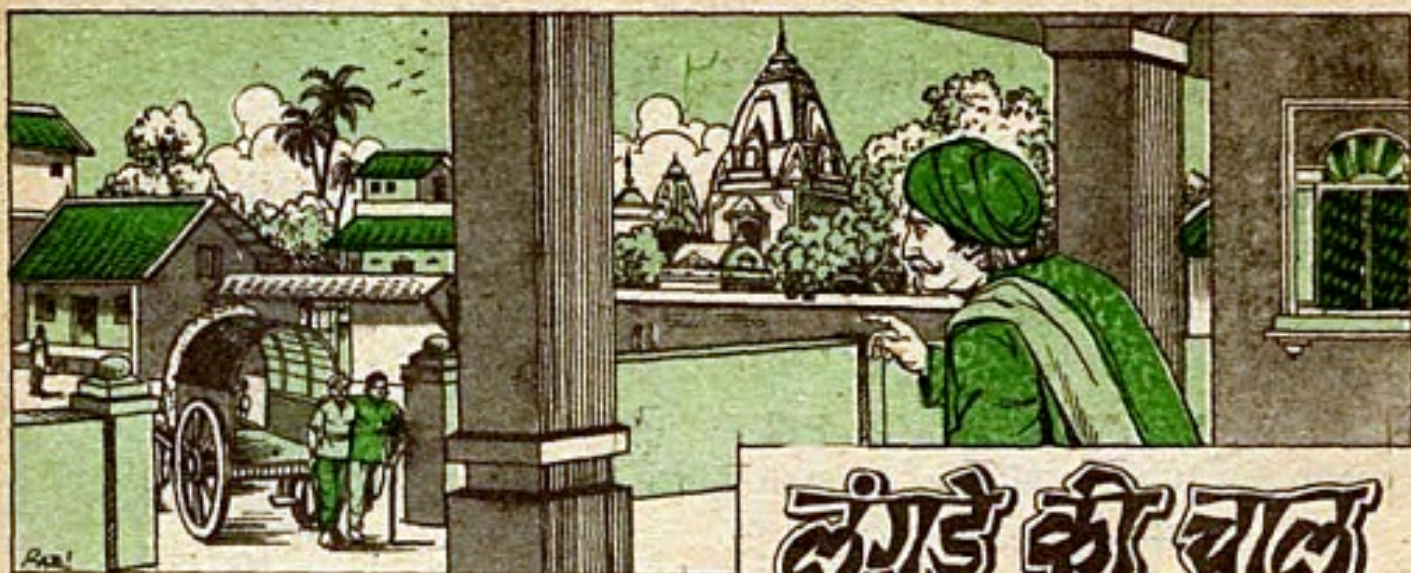
लंगड़े की चाल

एक गाँव में रामधन नामक एक अमीर था। वह बड़ा ही अक़्लमंद था। उसके तीन बेटे थे। बड़ा बेटा जगन्नाथ और मँझला गोपीनाथ बड़े ही मेहनती थे और वे खेती के कामों में अपने पिता की मदद किया करते थे। तीसरा बेटा रंगनाथ मंद बुद्धिवाला था। इसलिए रामधन सदा रंगनाथ के बारे में चिंतित रहा करता था। रंगनाथ की मंद बुद्धि को दूर करने के लिए औषध और मंत्र-तंत्र काम नहीं कर पाये।

रामधन अकसर अपने दोस्तों से कहा करता था—"मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ। आगे मैं ज्यादा मेहनत नहीं कर सकता। बड़े बेटे दोनों अपने पेट पाल सकते हैं, मगर मेरी चिंता तो तीसरे बेटे रंगनाथ को लेकर है। न मालूम वह कैसे अपना पेट पाल सकेगा!"

रामधन के दोस्त उसे समझाते रहे—"रंगनाथ के बारे में तुम कर ही क्या सकते हो। कोई ऐसा उपाय करो जिससे वह ज़िंदगी भर किसी प्रकार के अभाव के बिना अपने दिन गुजार सके।"

एक दिन रामधन के घर के सामने एक गाड़ी आ रुकी। उसमें से गोपीनाथ को सहारा देकर शंकर नामक एक आदमी ने गाड़ी से उतारा। गोपीनाथ का बायाँ पैर मोड़कर उस पर पट्टी बंधी हुई थी।

"क्या हुआ? मेरे गोपीनाथ को क्या हुआ है?" रामधन ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

शंकर ने रामधन को समझाया—"गोपीनाथ आम के पेड़ से गिर गया है। मैंने उसी वक़्त इसे वैद्य के पास ले जाकर दिखाया, वैद्य ने बताया कि गोपीनाथ का पैर टूट गया है, अब इलाज करने पर भी हड्डी जुड़ नहीं सकती।"

सुशीला गर्ग

"इसको हम तुरंत शहर में ले जाकर अच्छे वैद्य को दिखायेंगे। भले ही रुपये खर्च हो जाय, मगर इसका पैर ठीक हो जाना चाहिए।" रामधन ने कहा।

शंकर ने उसकी बात को काटते हुए कहा–"अब कोई फ़ायदा नहीं, वैद्य ने साफ़ बता दिया है कि इसका पैर किसी भी हालत में जुड़ नहीं सकता।"

गोपीनाथ ने भी शंकर की बातों का समर्थन करते हुए कहा–"जी हां, पिताजी, शंकर का कहना बिलकुल सच है। मैं तो हमेशा के लिए लंगड़ा बन गया हूँ।" यों कहकर वह रो पड़ा।

इसके बाद गोपीनाथ जब भी मौक़ा मिलता, अपने लंगड़े पैर को हिलाते रोकर कहता–"पिताजी! अब मेरा क्या होगा? क्या मुझे ज़िंदगी भर इसी तरह बैसाखी के सहारे चलना होगा?" गोपीनाथ का व्यवहार देख रामधन के मन में उसके प्रति जुगुप्सा पैदा होती गई।

एक दिन सारे गाँव में यह खबर फैल गई कि गाँव के मुखिये के समक्ष रामधन अमुक दिन अपनी सारी जमीन-जायदाद अपने बेटों को बांटकर देनेवाला है। सभी लोग मुखिये के घर पहुँचे।

रामधन ने बताया कि वह अपनी बीस एकड़ जमीन, बैल और हल, अपने बड़े व छोटे बेटे के बीच बराबर बांटकर देगा, मगर घर और गायों को मँझले बेटे को देना चाहता है।

रामधन का निर्णय सुनकर वहाँ पर इकट्ठे हुए सभी लोग दांतों तले उंगली दबाने लगे। गाँव भर के लोगों के झगड़े ईमानदारी के साथ फ़ैसला करनेवाला रामधन अपने मँझले बेटे के साथ ऐसा अन्याय कर बैठेगा? मगर रामधन के इस निर्णय का रहस्य किसी की समझ में न आया।

गोपीनाथ गुस्से में आकर बोला–"पिताज़ी, यह तो सरासर अन्याय है! जायदाद में से तीन हिस्से उन दोनों को

देकर एक चौथाई मुझे देना ठीक नहीं है। कोई भी पिता अपने बेटे के साथ ऐसा अन्याय नहीं करेंगे! आप के द्वारा यह अन्याय करानेवाला कोई व्यक्ति यहीं पर होगा। आप उसका नाम बता दीजिए, मैं अभी उसकी जान लेकर छोड़ूंगा। ये शब्द कहते गोपीनाथ दाँत पीसकर अपने बड़े भाई जगन्नाथ की ओर ताकने लगा।

रामधन ने कहा–"हाँ, गोपीनाथ का कहना सच है! मुझे इस प्रकार पक्षपात पूर्ण निर्णय करने की प्रेरणा देनेवाला व्यक्ति यहीं पर है। उसका नाम गोपीनाथ है! बचपन से ही गोपीनाथ धन को ज्यादा महत्व देता आ रहा है। गोपीनाथ को कतई यह पसंद नहीं है कि मैं मंदबुद्धिवाले रंगनाथ के प्रति विशेष प्रेम दर्शाऊँ! जमीन-जायदाद के बंटवारे के पहले मेरे प्रेम और वात्सल्य का संपादन करने के ख्याल से गोपीनाथ ने ऐसा अभिनय किया है कि वह पेड़ पर से गिरकर पैर तुड़वाकर लंगड़ा बन गया है। इस नाटक में उसकी मदद करनेवाले शंकर और वैद्य को भी उसने धन दिया है। मैंने पहले इस बात पर विश्वास किया था कि सचमुच गोपीनाथ पैर तुड़वा कर लंगड़ा बन गया है। लेकिन मैंने जल्द ही असली बात जान ली है। मैंने भाँप लिया कि जायदाद के बंटवारा होने तक गोपीनाथ अपनी पट्टी नहीं खोलेगा। इसीलिए मैंने बंटवारा करना चाहा। गोपीनाथ के प्रति मेरे मन में दया पैदा होने के बदले घृणा पैदा हो गई है।"

इस पर मुखिये ने समझाया–"गोपीनाथ, अगर तुम सचमुच लंगड़े हो, तो तुम्हारे पिताजी ने जायदाद का जो बंटवारा किया है, वह सचमुच तारीफ़ करने लायक़ है! जब तुम लंगड़े हो, 'तब तुम खेत कैसे जोत सकोगे? आराम से घर पर पड़े रहो!"

गोपीनाथ ने अब समझ लिया कि उसकी चाल चलने की नहीं, उसने उसी वक़्त अपनी पट्टी खोल दी। शर्म के मारे सर झुकाकर डग भरते वहाँ से चला गया।

सहज कामना

एक राज्य के दरबारी विदूषक के कई वर्षों तक कोई संतान नहीं हुई। आख़िर अधेड़ उम्र में उसके एक लड़का पैदा हुआ। विदूषक अपने बेटे को अपने प्राणों से ज्यादा मानता था और वह उस लड़के को खुश रखने के लिए हर तरह से कोशिश करता था। वह रोज अपने बेटे को पैसे देता था। लड़का जो चाहता सो ख़रीद लेता था।

ज्यादा वात्सल्य दिखाने के कारण लड़का हठी बन गया। उसके हठ पर नाराज़ हो एक दिन विदूषक ने अपने बेटे को पीटा। मगर दूसरे ही क्षण पिता का दिल पिघल गया। क्योंकि कभी उसे डाँटने में भी संकोच करनेवाला पिता आज उसे पीट चुका था।

इसके बाद विदूषक ने अपने लड़के को हद से ज्यादा पुचकार कर उसके हाथ एक रुपये का सिक्का दिया और उसके साथ समझौता करने के ख़्याल से पूछा–"बेटा, मैंने तुम्हें पीटा था; क्या तुम बुरा मान गये हो? तुमने इस बारे में कुछ सोचा भी है?"

लड़के ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया। "बताओ तो, तुमने क्या सोचा?" पिता ने पूछा।

"यही सोचा कि आप मुझे रोज पीटते रहेंगे तो क्या ही अच्छा होगा?" बेटे ने झट से जवाब दिया।
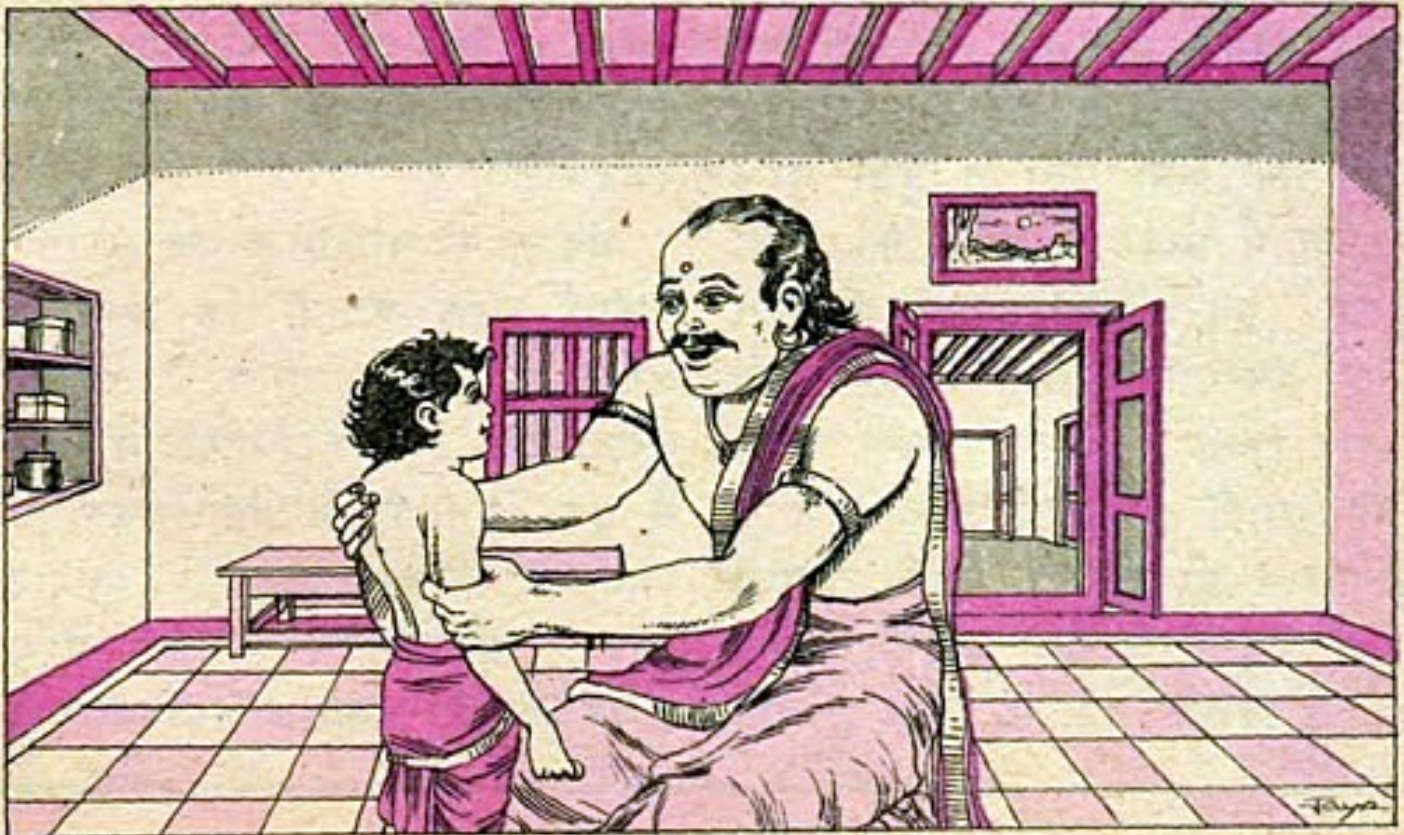
युवरानी की युक्ति

विदर्भ देश की युवरानी रत्नमंजरी एक बार अपनी सखियों के साथ वनविहार करने गई और वहाँ के तालाब में स्नान किया। स्नान करने के पूर्व युवरानी नें अपने सारे आभूषण उतार कर एक जगह रख दिये। स्नान समाप्त करके युवरानी किनारे पर आ गई। कपड़े बदलकर आभूषण पहनने को हुई तो वहाँ पर हीरे की एक अंगूठी न मिली, गायब थी।

आज तक कभी ऐसा न हुआ था। उस प्रदेश में बाहर के लोगों का आना मना था। युवरानी की सखियों का काम था कि युवरानी के स्नान करते समय उस ओर किसी के आने से मना करे। इसलिए अंगूठी की चोरी सखियों में से किसी एक ने की होगी। सबकी तलाशी लेने पर अंगूठी तो मिल जाएगी, लेकिन अंगूठी के वास्ते सब के दिल दुखाना युवरानी को कतई पसंद न था। पर ऐसी हालत में चोर को कैसे पकड़ा जाय, यही सवाल था।

राजधानी में अगर किसी के घर चोरी हो जाती, तो वे ज्योतिषियों के द्वारा चोरों को पकड़ने का प्रयत्न किया करते थे। मगर उन ज्योतिषियों पर युवरानी का विश्वास न था। फिर भी उसे लगा कि ऐसे व्यक्ति की मदद से वह चोर को आसानी से पकड़ सकती है!

अंतःपुर की नारियों ने एक ज्योतिषी की तारीफ़ करके बताया कि उसके जरिये अंगूठी का पता आसानी से लगाया जा सकता है। इस पर युवरानी ने गुप्त रूप से एक ज्योतिषी के पास खबर भेजी। ज्योतिषी आकर एकांत में युवरानी से मिला। युवरानी ने ज्योतिषी से पूछा– "मेरे हाथ का कंगन आज सुबह से दिखाई

सत्यनारायण दुबे

नहीं दे रहा है। क्या आप बता सकते हैं कि उसकी चोरी करनेवाले कौन हैं?"

ज्योतिषी थोड़ी देर तक हिसाब लगाकर बोला—"युवरानी जी! वह कंगन अब तक अनेक लोगों के हाथों में बदलकर दूर चला गया है। पंद्रह दिन के अन्दर वह अपने आप आपके हाथ आ जाएगा।"

"आप गलत कह रहे हैं। मेरे कंगन की किसी ने चोरी नहीं की है। मैं आप से झूठ बोली। मेरा कंगन मेरे गहनों की पेटी में सुरक्षित है! वास्तव में मेरी अंगूठी की चोरी हो गई है। उसे उठानेवाली मेरी सखियों में से एक है! चोर को पकड़ने में आपकी शक्ति काम न देगी, इसलिए मैं आपके द्वारा अपनी युक्ति का उपयोग करूँगी। क्या आप मेरे कहे अनुसार करने को तैयार हैं?" युवरानी ने ज्योतिषी से पूछा।

"जी हाँ, युवरानी जी! आप जैसा कहेंगी, मैं वैसा करने को तैयार हूँ।" ज्योतिषी ने जवाब दिया। इस पर युवरानी ने उसे कई बातें समझाकर गुप्त मार्ग से उसे बाहर भेज दिया। इसके बाद एक दासी ने युवरानी के पास प्रवेश करके कहा—"युवरानी जी! आप से मिलने के लिए कोई ज्योतिषी आये हुए हैं।"

युवरानी ने अपनी सखियों को बुलवाकर कहा—"सुना है कि मेरी चोरी गई अंगूठी

का पता बताने के लिए कोई ज्योतिषी आये हुए हैं, देखेंगे, वे क्या कहते हैं?" फिर एक दासी को आदेश दिया कि वह उस ज्योतिषी को बुला लावे।

ज्योतिषी युवरानी के सामने हाजिर हुआ। युवरानी ने उससे कहा—"महाशय, आप को मैंने दो कारणों से बुला भेजा है! आज सुबह किसी ने मेरे कंगन की चोरी की है! उस चोर का आप को पता बताना होगा! दो दिन पहले एक छोटी-सी चोरी और हो गई है। मेरी एक अंगूठी खो गई है। आप को बताना होगा कि वह अंगूठी किसके पास है?"

"जो आज्ञा! युवरानीजी!" इन शब्दों के साथ ज्योतिषी ने कोई हिसाब लगाया और कहा–"युवरानीजी! आप के कंगन की किसी ने चोरी नहीं की। वह आप के गहनों की मंजूषा में सुरक्षित है। आप उसमें रखकर भूल गई।"

युवरानी ने अपनी एक सखी को भेजकर गहनों की मंजूषा मँगाई। उसे खोलकर कंगन ऊपर निकाला, आश्चर्य का अभिनय करते बोलीं–"आप की शक्ति अद्‌भुत है! कृपया मेरी अंगूठी का भी पता बताइये! अगर उसकी चोरी करनेवाले अंत:पुर के लोग हों तो मैं निश्चय ही उनका सर कटवा दूँगी।"

"आप चोर को ऐसी कठोर सजा देना चाहती हैं, इसलिए मैं सच्ची बात बताकर एक व्यक्ति की जान लेने से संकोच करता हूँ। अगर आप छोटी सी सजा देने को तैयार हैं तो मैं इसी क्षण उस व्यक्ति का नाम बता सकता हूँ।" ज्योतिषी बोला।

"अगर चोर अपनी चोरी मान ले और चोर की यही पहली चोरी हो तो मैं आप को संतुष्ट करने के लिए आप उसे क्षमा करने के लिए कहे तो मैं क्षमा कर सकती हूँ। लेकिन आप के मुँह से चोर का नाम सुनने पर उसे मौत की सजा अनिवार्य है।" युवरानी ने कहा।

युवरानी के मुँह से ये शब्द निकलने की देरी थी कि सुनंदनी नामक एक सखी युवरानी के पैरों पर गिरकर फूट-फूटकर रोते हुए बोली–"युवरानीजी, मैंने लालच में पड़कर यह अपराध किया है। मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि यह छोटी सी अंगूठी मेरी जान पर आफ़त ढा देगी।"

"सुनो, सजा अंगूठी की क़ीमत को लेकर नहीं होती, विश्वासघात के लिए होती है। अंगूठी की अगर तुम्हें ज़रूरत थी तो मुझसे पूछ लेती। कोई मौक़ा देख क्या मैं नहीं दे पाती? आइंदा कभी ऐसा काम न करो।" इन शब्दों के साथ युवरानी ने सुनंदनी को क्षमा कर दिया और ज्योतिषी को पुरस्कार देकर भेज दिया।

चीन की राजकुमारी

पुराने जमाने की बात है। चीन देश के एक राजा के स्यू ची नामक एक पोती थी। उसके अलावा राजा के कोई रिश्तेदार न थे। पोती जब तीन साल की थी, तभी उसके माता-पिता स्वर्गगामी हो गये। राजा ने लाड़-प्यार से उस कन्या को पाल-पोसकर बड़ा किया।

स्यू ची बड़ी रूपवती थी, साथ ही वह सभी विद्याओं में पारंगत थी। राजगद्दी की वारिस भी थी। जब वह सोलह साल की हो गई, तभी राजा ने उसका विवाह करना चाहा। उसे योग्य वर की खोज करने दूत चारों तरफ़ चल पड़े। उस देश के कई युवक स्यू ची के साथ राज्य को भी हस्तगत करने को ललचा उठे।

राजा का विचार था कि स्यू ची के साथ विवाह करने की इच्छा रखनेवाले युवकों की कठिन परीक्षा ली जाय और उसके अनंतर राजा बनने की योग्यता भी रखनेवाला हो। देश-विदेशों से कुल पच्चीस युवक स्यू ची के साथ विवाह करने आगे आये।

मगर स्यू ची ने इसके पूर्व ही एक युवक को वर लिया था। वह युवक प्रधान मंत्री का पुत्र चु वांग था। वह सुंदर और सुशिक्षित भी था। राजनीति में पारंगत भी था। वे दोनों बचपन में साथ साथ खेलते थे। सबने यही सोचा कि उन दोनों का विवाह हो जाय तो अति उत्तम होगा। मगर राजा का उद्देश्य कठिन परिक्षाओं में सफल निकलनेवाले युवक के साथ ही स्यू ची का विवाह करने का था।

राजा ने जो परीक्षाएँ रखी थीं, उनमें प्रथम परीक्षा युवकों की रूप-रेखाओं तथा शारीरिक गठन को लेकर थी। राजकुमारी

श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

के साथ विवाह करने आये हुए पच्चीस युवकों में से केवल दस युवक इस परीक्षा में सफल निकले। बाक़ी पंद्रह युवक अपने रास्ते वापस लौट गये। सफल निकले युवकों में चु वांग भी एक था।

इसके बाद क्रमशः युद्ध विद्याओं, खेलों, सहनशीलता तथा समय स्फूर्ति की परीक्षाएँ चलीं, धनुर्विद्या में छे पराजित होकर केवल चार बच निकले। यह बड़ी कठिन परीक्षा थी। इसके बाद कई दिनों तक पैदल चलने, सीध में खड़े पहाड़ों पर चढ़ने में एक युवक हार गया, बाक़ी तीन बच रहे।

साहस की परीक्षा लेने के लिए तीन युवकों को तीन गुफाओं में अकेले रखा गया। दूसरे दिन सुबह तक डर के मारे एक युवक बेहोश हो गया था। ऐसी अफवाह थी कि उन गुफाओं में भूत-प्रेतों एवं पिशाचों का निवास होता है। आखिर सभी परीक्षाओं में दो युवक सफल निकले। उनमें एक प्रधान मंत्री का पुत्र चु वांग था और दूसरा दूर के राज्य का राजकुमार हुवांग खो। दोनों स्यू ची के साथ विवाह करने की योग्यता रखते थे, लेकिन दोनों युवक राजकुमारी के साथ विवाह नहीं कर सकते थे। इसलिए राजा ने यह घोषणा की कि उनमें से जो युवक किसी अद्भुत का प्रदर्शन करेगा, उसके साथ राजा अपनी पोती का विवाह करेंगे। राजा को यह सलाह देनेवाला व्यक्ति

दरबारी जादूगर चुंग चिंग था। वह स्यू ची और चु वांग से बड़ा स्नेह रखता था और उन दोनों का विवाह करने की उसकी प्रबल इच्छा थी।

राजा ने दोनों प्रतिभागियों को बुलवाकर कहा—"तुम में से जो किसी अद्भुत का प्रदर्शन करेगा, उसी के साथ स्यू ची का विवाह किया जाएगा।"

चुवांग इसके पूर्व ही चुंग चिंग के पास इंद्रजाल विद्या में उत्तीर्ण हो चुका था। मगर हुवांग खो ऐसी कोई विद्या जानता न था। वह एक छोटी-सी दीठ बांधने की विद्या का प्रदर्शन करने का प्रयत्न करके असफल हो चुका था। हारने के बाद भी वह अपने घर वापस नहीं गया, बल्कि वह यह देखने की इच्छा से वहीं रह गया कि देखें, दूसरे दिन चुवांग कैसे अद्भुत का प्रदर्शन करता है!

दूसरे दिन स्यू ची राजदरबार में हाज़िर हुई। चुवांग अपने साथ दो फुट लंबी रेशमी रस्सी लाया। उसने रस्सी के दोनों छोर स्यू ची के दो हाथों में बांध दिया। इसके बाद उसने राजकुमारी से एक कंगन मांगा। राजकुमारी ने अपनी दासी को भेजकर एक कंगन मंगवाया और चुवांग के हाथ दिलाया। इसके बाद स्यू ची के हाथों पर कुहनियों तक एक तौलिया ढक दिया। तब चुवांग ने अपने हाथ का कंगन दरबारी जादूगर के हाथ देकर उसे कुएँ में गिराने को कहा।

चुंग चिंग कुछ लोगों को साथ लेकर कुएँ के पास पहुँचा और कंगन को कुएँ में गिराकर लौट आया।

इस पर चुवांग ने चुंग-चिंग से पूछा– "महाशय, क्या आपने सचमुच कंगन को कुएँ में गिरा दिया है?"

चुंग चिंग ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया।

इस पर चुवांग ने कहा–"यह कैसे संभव है? अगर स्यू ची के साथ मेरा विवाह करना विधि का निर्णय हो तो उनके हाथ का कंगन उन्हीं के हाथ में होगा! इसलिए महाराजा से निवेदन है कि वे कृपा करके राजकुमारी के हाथों पर से तौलिया हटा दे!"

तौलिये के हटाने पर सब ने देखा कि स्यू ची की कलई पर बंधी रेशमी रस्सी पर कंगन लटक रहा है। इसे देख सब लोग आश्चर्य में आ गये। हुवांग ने आगे बढ़कर हृदय पूर्वक चुवांग का अभिनंदन किया।

इसके बाद राजा की पोती तथा प्रधान मंत्री के पुत्र का विवाह वैभव पूर्वक संपन्न हुआ।

चुवांग के अद्भुत का रहस्य यह है कि यह नाटक स्यू ची, चुंग चिंग और चुवांग तीनों ने मिलकर रचा था। स्यू ची ने अपने कंगन के जोड़े में से एक अपनी कोहनी के समीप धारण किया और उस पर कलई तक एक अंगरखा पहन लिया। उस जोड़े का दूसरा कंगन अपनी परिचारिका के द्वारा मंगवाया। जब उसके दोनों हाथों में रेशमी रस्सी बांधकर उसके हाथों पर तौलिया ढक दिया गया, तब राजकुमारी ने अपने हाथ के ऊपर स्थित कंगन को नीचे कलई तक सरकने दिया और इस तरह उसे रेशमी रस्सी पर ला दिया।

मंत्री के पुत्र ने यह अद्भुत प्रदर्शित किया था। विवाह के बाद स्यू ची ने दरबारी जादूगर चुंग चिंग का भव्य सत्कार किया।

ईमानदारी

पद्मपुर के राजा अग्निपर्ण का ख़ज़ाना संपत्ति से भरा पड़ा था। राजा कोशाध्यक्षों पर कड़ी निगरानी रखे हुए थे। जब भी वे धोखा देते, उन्हें कड़ी सजा दी जाती थी।

एक बार मल्लिकार्जुन नामक नया कोशाध्यक्ष नियुक्त हुआ था। राजा नागरिक वेष में मल्लिकार्जुन को देखने गये, वे बोले–"महाशय, मैं आप से मिलने आया हूँ।"

दीपक की रोशनी में हिसाब किताब देखने वाले कोशाध्यक्ष ने कहा–"कृपया आप एक मिनट के लिए रुक जाइये! मुझे अपना यह काम पूरा करने दीजिए!" यों कह कर कोशाध्यक्ष ने हिसाब-किताब का काम पूरा किया। दीपक बुझाकर एक और दिया जलाया, तब पूछा–"बताइये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?"

राजा ने विस्मय में आकर पूछा–"आपने वह दीपक बुझाकर यह दिया क्यों जलाया?"

"महाशय, मैंने ख़जाने के काम के लिए ख़जाने का दीपक इस्तेमाल किया। अब मैं ने अपने निजी काम के लिए अपना दीपक जलाया।" मल्लिकार्जुन ने जवाब दिया।

राजा एक ईमानदार कोशाध्यक्ष को पाकर बहुत खुश हुए।

परिवर्तन

महेन्द्रपुरी के राजा वैसे बड़ ही दक्ष थे, मगर अचानक उनके राज्य में चोरियाँ शुरू हो गईं। ऐसा मालूम हुआ कि चोरों का अड्डा जंगल में है, क्यों कि जंगल के रास्ते चलनेवाले यात्री ही लूटे जाते थे।

राजा ने दस सिपाहियों को चोरों को पकड़ने जंगल में भेजा, पर वे तीसरे दिन सर मुड़वा कर वापस लौटे। उनकी सफलता केवल यही थी कि उन लोगों ने चोरों के सरदार के नाम का पता लगाया था।

इसके बाद मंत्री का पुत्र चोरों को पकड़ने के लिए चल पड़ा। तीसरे दिन जब वह लौटा, उसके हाथ में चूड़ियाँ थीं। बदन पर साड़ी व चोली दिखाई दीं। उसने चोरों के सरदार के घर का पता लगाया था।

इस बार राजा ने चोरों को पकड़ने के लिए सेनापति को भेजा, जब वह लौटा एक गधे से बंधा हुआ था और उसके शरीर पर रंगीन जल छिड़के हुए थे। उसने चोरों के सरदार के मकान का प्रधान द्वार देख लिया था।

इस बार राजा स्वयं चोरों को पकड़ने का निश्चय कर लकड़हारे के वेष में चल पड़े। इसके पहले जो लोग चोरों को पकड़ने जाकर अपमानित हुए, पर जो भेद लगाये थे, उनके आधार पर राजा ने चोरों के सरदार के घर में प्रवेश किया।

उस वक़्त चोरों का सरदार महेन्द्र चोरी करने गया हुआ था। महेन्द्र का पुत्र उस समय सो रहा था। राजा ने महेन्द्र की पत्नी को बेहोशी की दवा सुंघवा दी और उसके पुत्र को उठाकर राजमहल को लौट आये। साथ ही अगर

मायाराम त्रिपाठी

चोरों का सरदार अपने बेटे की खोज में आये तो उसे बन्दी बनाने का भी आवश्यक इंतज़ाम किया ।

चोरों के सरदार ने अपने बेटे की बड़ी खोज की, आखिर उसने जान लिया कि उसका बेटा राज महल में है। इस पर वह एक सन्यासी का वेष धरकर राजा के दर्शन करने राज महल में पहुँचा।

राजा ने सन्यासी का स्वागत तो किया, मगर वे चिंता में डूबे दिखाई दे रहे थे। इस पर सन्यासी ने राजा की चिंता का कारण पूछा। राजा सन्यासी को महल के अन्दर ले गये, दो झूलों में लेटे हुए दो बच्चों को दिखाया। दोनों बच्चे बुखार से बेहोशी की हालत में थे।

चोर ने पता लगाया कि उन दोनों बच्चों में से एक उसी का लड़का है।

"ये दोनों बच्चे एक ही माँ के पुत्र से नहीं लगते? इन्हें क्या हो गया है?" चोर ने राजा से पूछा।

राजा ने महेन्द्र के पुत्र को उठा लाने का समाचार सुनाकर कहा—"जब से मैं इस बच्चे को उठा लाया हूँ, तब से शायद चोरियाँ बंद तो हो गईं, मगर चोर अपने बच्चे के वास्ते यहाँ पर नहीं आया। इस बीच मेरे और महेन्द्र के बच्चे दोनों विष ज्वर के शिकार हो गये। वैद्य इस ज्वर के लिए आवश्यक जड़ी-बूटी की बड़ी खोज कर रहे हैं।"
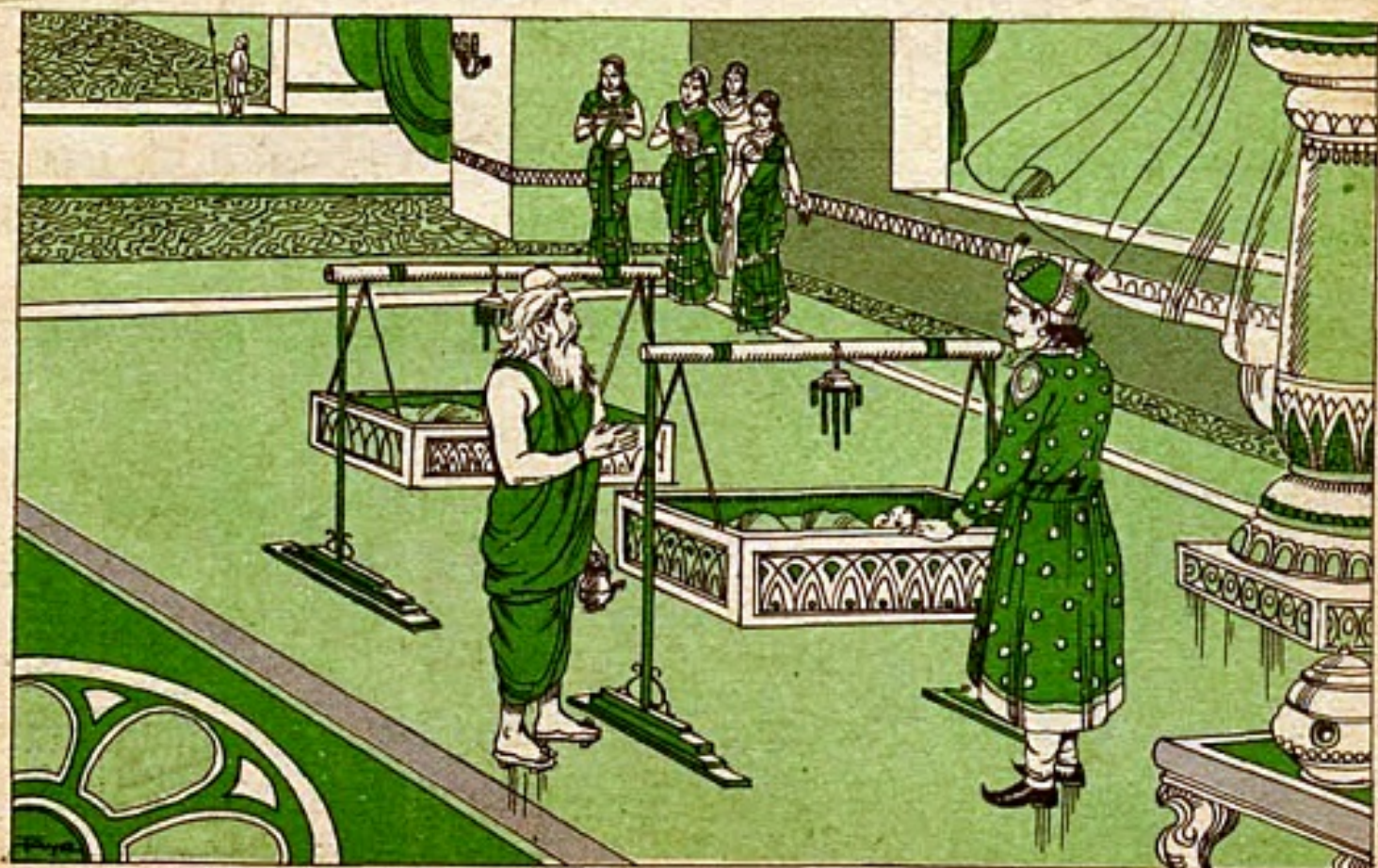
इतने में एक वैद्य औषध के साथ दौड़कर आ पहुँचा और बोला–"महाराज, थोड़ी-सी जड़ी बूटी हाथ लग गई है। इससे एक बच्चे के लिए पर्याप्त दवा बन गई है। क्या मैं यह दवा राजकुमार के वास्ते इस्तेमाल करूँ?"

राजा ने दृढ़ता पूर्ण स्वर मे कहा–"ऐसा कदापि नहीं हो सकता। पहले तुम दूसरे बच्चे का इलाज करो। थोड़ी सी और दवा मिल जाने पर राजकुमार का इलाज किया जा सकता है। पर देखो, किसी भी हालत में इस बच्चे को बचाना तुम्हारा कर्तव्य है।"

वैद्य ने अचरज में आकर राजा के कहे अनुसार किया।

इस दृश्य को देखनेवाले महेन्द्र ने पूछा–"महाराज, आप यह क्या कर रहे हैं? क्या आप की दृष्टि में आप के बच्चे से भी एक चोर का बच्चा ज्यादा प्यारा है? प्रजा को तंग करनेवाले चोर के बच्चे को बचाना क्या जरूरी है?"

"यह बच्चा तो प्रजा को तंग नहीं करता! यह निरपराधी है। मैं इस बच्चे को चुरा लाया हूँ। चोर के पकड़े जाने के बाद यदि मैं इस बच्चे को सुरक्षित रूप से इसकी माँ के हाथ सौंप दूँ तो तभी मैं चोर के अपराध का फ़ैसला करने की योग्यता रख सकूँगा। अगर क़िस्मत प्रबल रही तो मेरे पुत्र की तबीयत अपने आप वही ठीक हो जाएगी।" राजा ने उत्तर दिया।

"महाराज! मैं ही वह डाकू महेन्द्र हूँ। मैं महा पापी हूँ। मैंने अपराध किया है।" ये शब्द कहते डाकू राजा के पैरों पर गिर पड़ा।

इस बीच एक और जगह से प्राप्त जड़ी बूटी के द्वारा राजकुमार का भी इलाज हुआ। शीघ्र ही दोनों बच्चे पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गये।

महेन्द्र ने अपने अनुचरों तथा लूटे हुए धन के साथ प्रवेश करके राजा के हाथों में आत्मसमर्पण किया। राजा ने उन सबके लिए आजीविका का उचित प्रबंध किया।
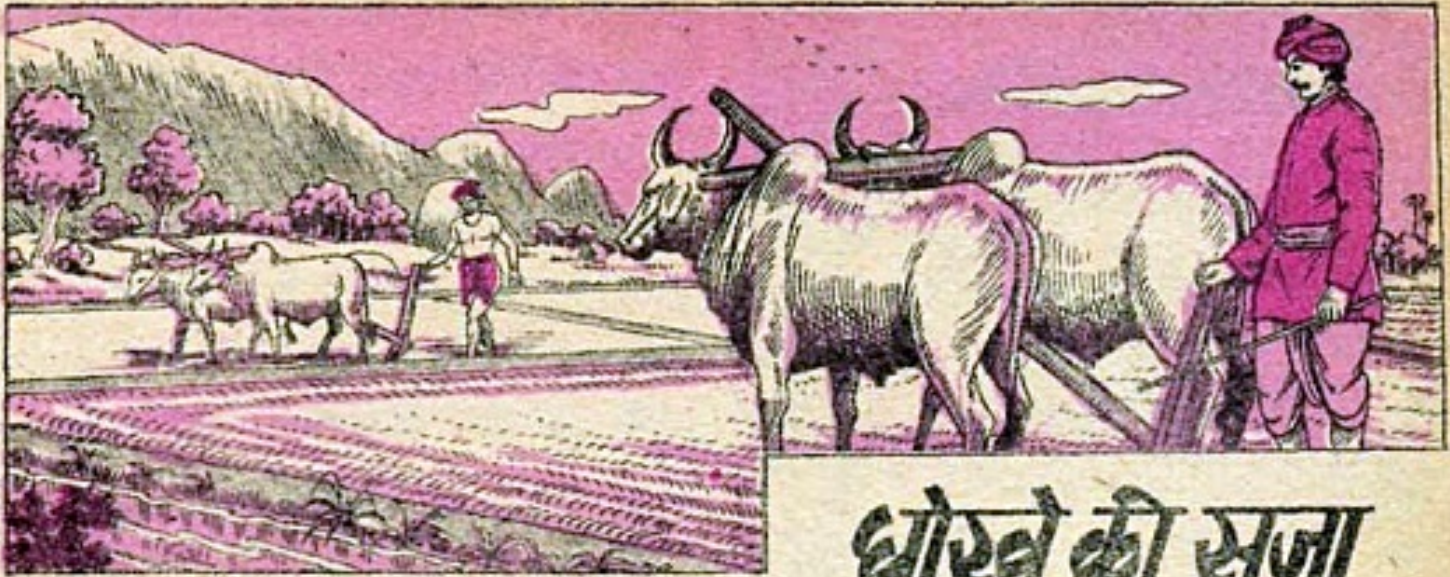
धोखे की सजा

एक गाँव में शिवराम और जयराम नामक दो किसान थे। वे मौक़े को देख दोस्त बने रहने का नाटक रचा करते थे। उनके घर और खेत अगल-बगल में ही थे। दोनों काम पर साथ जाते और साथ लौटते थे। इस तरह जोड़े के रूप में जीनेवाले वे दोस्तों जैसे लगते थे। वास्तव में उनके स्वभाव भिन्न थे। दोनों एक से बढ़कर एक चालाक थे। अपने स्वार्थ के वास्ते वे एक दूसरे को धोखा दिया करते थे। एक से बढ़कर एक ज़्यादा फ़सल उगाने की होड़ लगाया करते थे।

शिवराम के खेत से जयराम का खेत ज़्यादा समतल था। इसलिए शिवराम के खेत का पानी आसानी से जयराम के खेत में बह जाता था। खासकर जब पानी की तंगी हो जाती, तब भी जयराम के खेत के लिए आवश्यक पानी शिवराम अपने खेत से दिया करता था। दोनों के बीच जब-तब कहा-सुनी हो जाती थी, मगर शिवराम से कुछ करते नहीं बनता था। दोनों खेतों के बीच की मेंड को शिवराम काफी मजबूत करवा देता, लेकिन किसी चूहे के बिल से होकर जयराम के खेत में पानी बह ही जाता था। लाचार होकर शिवराम ढेंकी चलाता तो जयराम मंद मंद मुस्कुरा उठता था। क्रमशः दोनों के बीच बोली बंद हो गई।

एक बार दोनों ने अपने अपने खेत में मकई बोये। फसल जब पक गई तब दोनों अपने खेतों में मचान बांधकर पहरा देने लगे। जाड़े के दिन थे। एक दिन रात को जोर की सर्दी पड़ी। शिवराम को लगा कि कोई ऐसा उपाय करे जिससे जयराम ही उसके खेत का भी पहरा दे। झट से उसने घास लेकर मनुष्य जैसे

गणेश पांडे

से घर पर ही सोता है। तुम्हीं अकेले दोनों खेतों का पहरा क्यों देते हो?"

जयराम अपनी पत्नी की बातों पर यक़ीन नहीं कर पाया। वह डांटकर बोला–"तुम सपना तो नहीं देख रही हो? रात भर मैं और शिवराम होड़ लगाकर पहरा देते हैं। उसके साथ होड़ लगाने की वजह से ही मैं रातों में घर नहीं लौट रहा हूँ।"

लेकिन एक दिन जयराम के दिमाग में एक उपाय सूझा। शिवराम रात भर खड़े खड़े खेत का पहरा देता है, इसलिए अगर वह शिवराम की आँख बचाकर घर जाकर सो जाय तो क्या ही अच्छा होगा?

यों सोचकर जयराम बिल्ली की भांति दबे पाँव मचान से उतरकर घर लौट आया। मगर उसे शिवराम के घर से किसी पुरुष की आवाज़ सुनाई दी।

जयराम की पत्नी बोली–"यह सचमुच शिवराम की आवाज़ है। मैंने बताया कि वह रोज घर पर ही रहता है, तुमने यक़ीन नहीं किया। अब तो समझ गये हो न?"

"तेरा सिर! शिवराम को मचान पर खड़े अभी अभी मैं देख आया हूँ। देखती रह जाओ, मैं अभी उसे बुला लाकर इस मामले का फ़ैसला कर देता हूँ।" यों कहते जयराम खेत के पास दौड़ गया और

खिलौना बनाया, उसे कुर्ता, धोती पहनाकर मचान पर खड़ा किया, तब वह कंबल ओढ़े चुपचाप अपने घर जाकर लेट गया।

इस प्रकार शिवराम रोज रात को अपने मचान पर खिलौना खड़ा करके प्रातःकाल आकर उसे उतार देता था। जयराम को इसका पता न था। वह शिवराम के साथ होड़ लगाने के ख्याल से रात भर जागते दोनों खेतों का पहरा देता आया।

एक दिन जयराम की पत्नी ने भांप लिया कि शिवराम रात के वक़्त घर पर ही सोता है, अपने पति से बोली–"अजी, सुनो तो सही! शिवराम रात भर आराम

बोला–"अबे शिवराम! एक बार अपने घर जाकर तो देख लो! तुम्हारे घर पर क्या हो रहा है?"

पर मचान पर का खिलौना हिला तक नहीं। जयराम ने मचान पर चढ़कर घास के खिलौने को देखा, तब उसे पता लगा कि इतने दिन से शिवराम उसे कैसे दगा दे रहा है। जयराम को अपने भोलेपन पर सचमुच रोना आया। उसकी पत्नी ने सच्ची बात बताई तो उसने यक़ीन नहीं किया। अब तो एक ही रास्ता है। आज तक शिवराम जो काम करता रहा, उसे वह कई दिनों से करता आ रहा है, इस बात का विश्वास दिलाकर उसे दगा देना है।

यों विचार कर जयराम ने भी घास का एक खिलौना तैयार किया। उसे कपड़े पहना कर मचान पर खड़ा किया, तब जाकर वह घर लौटकर सो गया, शिवराम की भांति जयराम भी तड़के उठकर खेत में जाता और खिलौने को उतार देता था।

फसल की कटाई तक दोनों खेतों का पहरा घास के खिलौनों ने ही दिया। एक दिन आधी रात के वक़्त चोर आ धमके! मगर वे इस भ्रम में पड़े रहे कि मचानों पर पहरेदार खड़े हैं, वे इस ताक में थे कि जरा वे लोग सो जाय तो फसल काटकर ले जायें। मगर बहुत ही तड़के जब मुर्गे बांग देने लगे, तब शिवराम और जयराम आये, मचान पर चढ़कर

खिलौने उतारे और उनकी जगह वे खड़े हो गये। इसे चोरों ने देख लिया।

असली बात चोरों पर प्रकट हो गई। इसलिए दूसरे दिन रात को चोर आये, निश्चित हो दोनों खेतों की फसल काटकर चलने लगे तो उन्हें मज़ाक़ सूझा। तब उन लोगों ने जयराम के मचान पर के खिलौने को शिवराम के मचान के खिलौने के सामने रखा। दोनों के सिरों में लकड़ी के काग घुसेड़कर उनमें आग लगाकर चले गये।

थोड़ी देर बाद जयराम ने पहुँचकर देखा कि उसका खिलौना शिवराम के मचान पर है, और दोनों खिलौने चुरुट जलाते बातचीत कर रहे हैं। इसे देख जयराम डरकर दौड़ने लगा, तभी उसे रास्ते में शिवराम दिखाई दिया। उसने घबराकर पूछा—"जयराम, क्या हुआ? कहीं खेत में चोर तो घुस नहीं आये?"

जयराम ने अपने किये धोखे का परिचय देकर बताया कि दोनों खिलौने बातचीत करते मचान पर कैसे उसे दिखाई दिये। दोनों अचरज में आ गये। खेत में पहुँच कर उस दृश्य को देख सोचा कि वे कोई भूत और पिशाच हैं। मगर उनके देखते देखते एक साथ दोनों खिलौने जल उठे।

शिवराम और जयराम एक दूसरे को गले लगकर रो पड़े। थोड़ी देर में सवेरा हो गया। तब जाकर उन्हें पता लगा कि सारी फसल चोरों के हाथ लग गई है।

शिवराम ने कहा—"हमने एक दूसरे के जो धोखा दिया, इसके लिए हमें अच्छी सजा मिल गई है।"

"भाई साहब! आइंदा हमें कभी एक दूसरे को धोखा नहीं देना है।" जयराम ने रोनी सूरत बनाकर कहा।

हम दोनों के बीच अगर सच्ची दोस्ती होती तो हम दोनों एक एक दिन एक के हिसाब से दोनों खेतों का पहरा देते, दूसरा आराम से घर पर सो जाते। हमारी फसल भी चोरों के हाथों में न पड़ती।

राम राज्य में सभी लोग समान रूप से राजा की सेवा में पहुँचकर न्याय की माँग कर सकते थे। एक दिन रात को एक कुत्ता खून से लथपथ हो दम तोड़ने की हालत में श्रीरामचन्द्रजी के महल के सामने जाकर इस तरह भूँकने लगा, मानो राजा को पुकार रहा हो!

रामचन्द्रजी जाग उठे और कुत्ते के पास पहुँचकर उसके सिर पर हाथ फेरा। कुत्ते की सारी पीड़ा जाती रही, उसने उत्तेज में आकर कहा–"हे प्रभु! एक युवक ने अकारण ही मुझे पीटा है। वह बेकार इधर-उधर घूम रहा है। मैं आप से निवेदन करता हूँ कि आप उसे एक मंदिर का निधि पालक नियुक्त करें।"

इस पर रामचन्द्रजी ने विस्मय में आकर पूछा–"तुम अपना अहित करनेवाले को मृत्युदण्ड या कड़ी सजा माँगे बिना उसका उपकार चाहते हो?"

"भगवन, ऐसी कोई बात नहीं है! पिछले जन्म में मैं एक बहुत बड़े देव संस्थान का निधि पालक और पुजारी रहा हूँ। उस वक़्त मैंने मंदिर की सारी संपत्ति हड़प ली और ऐसे पाप किये जिसके कारण मैं इस जन्म में एक कुत्ते के रूप में पैदा हुआ हूँ। वह युवक भी मेरी भांति कुत्ते के रूप में जन्म धारणकर यातनाएँ भोग ले, तभी मेरा क्रोध शांत होगा। यही मैंने सोचा था; मगर आप के पावनस्पर्श से मेरा क्रोध और प्रतीकार

की भावना जाती रही, अब में उत्तम लोक को प्राप्त करने जा रहा हूँ।" यों कहकर कुत्ते ने अपने प्राण त्याग दिये। उस युवक ने अपनी करनी पर पश्चात्ताप किया और उत्तम व्यक्ति बन गया।

* * *

अश्वमेध याग के पश्चात रामचन्द्रजी ने थोड़ा समय शासन किया, एक दिन यमराज एक ब्राह्मण के रूप में उपस्थित हो बोले– "हे रामचन्द्रजी! हमें एकांत में बात करनी है। हमारे वार्तालाप के समय कोई प्रवेश करे तो उसका शिरच्छेद करना होगा!"

रामचन्द्रजी ने अपनी सम्मति दी। इसके बाद लक्ष्मण को यह समाचार सुनाकर द्वार पर उन्हें पहरा देने को नियुक्त किया और वे यमराज के साथ मंत्रणा-गृह में चले गये।

यमराज रामचन्द्रजी से बोले–"रामचन्द्रजी, आप श्रीमहाविष्णु हैं। आप के अवतार का कार्य संपन्न हो चुका है! सीताजी लक्ष्मी के रूप में अपने मायके क्षीरसागर में आप की प्रतीक्षा कर रही हैं। इसलिए अब आप को आदि शेष तथा शंक-चक्र बने अपने छोटे भाइयों के साथ क्षीरसागर में पहुँचना होगा!"

उसी समय दूर्वासमुनि आ पहुँचे और लक्ष्मण से बोले–"मुझे इसी वक्त रामचन्द्रजी से मिलना है। मुझे रोकोगे तो में ऐसा शाप दूंगा जिससे सारे रघुवंश का विनाश होगा।"

लक्ष्मण ने सोचा कि अपने वंश के विनाश के बदले उन्हें अकेले शिरच्छेद प्राप्त करना ही उचित है; यों विचार करके वे दूर्वास के आगमन का समाचार देने मंत्रणागृह में पहुँचे, इस पर तत्काल यमराज अंतर्धान हो गये।

रामचन्द्रजी ने अपने वचन के अनुसार लक्ष्मण को शिरच्छेद का दण्ड दिया। बुजुर्गों ने इस पर विचार करके रामचन्द्रजी को समझाया कि देश निकाले सजा भी मृत्युदण्ड के समान है, इसलिए लक्ष्मण को

देश से निकालना ज्यादा उत्तम होगा। लक्ष्मण ने ये सारी बातें सुनीं, राम नगर को छोड़ अयोध्या को पार करके सरयू में उतरकर उन्होंने अपना अवतार त्याग दिया।

लक्ष्मण के सरयू नदी में डूबने के पश्चात रामचन्द्रजी ने भरत और शत्रुघ्न को सारा समाचार सुनाकर राज्याभिषेक के लिए आवश्यक सारे प्रबंध करने का उन्हें आदेश दिया। अयोध्या नगर अद्‌भुत रूप से सजाया गया। प्रत्येक घर में आवश्यक खाध्य पदार्थ, रेशमी वस्त्र, आभूषण तथा हल्दी-कुंकुम भेजे गये।

इसके बाद रामचन्द्रजी ने कुश-लव का राज्याभिषेक किया, हनुमान को बुलाकर समझाया–"हनुमान, मैंने अनेक वर्षों तक राज्य का शासन किया है, अब मैं विश्राम करने जा रहा हूँ। मैं रहूँ या न रहूँ, तुम कुश-लवों के मार्ग दर्शक बनकर राज्य की निगरानी करते रहो! मैं राज्य की रक्षा का भार तुम्हारे कंधों पर सौंप रहा हूँ।"

इसके बाद श्रीरामचन्द्रजी सरयू नदी में जाने को तैयार हुए, इस पर एक जुलूस का इंतज़ाम किया गया। वह महोदय पर्व का दिन था। मंगल वाद्य बज रहे थे, ब्राह्मण वेद-पठन कर रहे थे, तूर्यनाद आसमान में गूंज रहे थे। रामचन्द्रजी पैदल ही सरयू नदी की ओर चल पड़े। भरत ने रामचन्द्रजी के लिए श्वेत छत्र धारण किया, शत्रुघ्न चँवर डुला रहे थे, महलों पर से सुमंगलियों ने पुष्पों की वर्षा की, हनुमान रामचन्द्रजी के पीछे मंद गति के साथ परेशान हो चल रहे थे। जनता को मालूम न था कि रामचन्द्रजी सरयू नदी में क्यों जा रहे हैं? इसलिए सब कोई अपने अपने ढंग से कुछ कह रहे थे। आखिर जुलूस सरयू नदी पर पहुँचा।
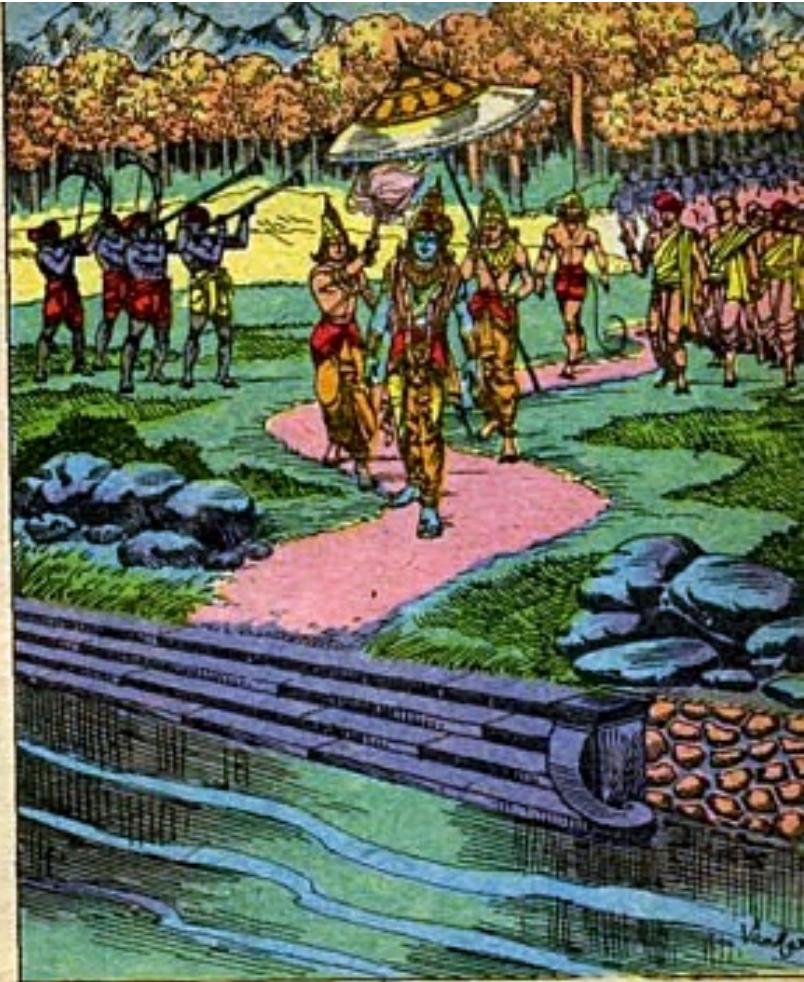
रामचन्द्रजी ने सरयू नदी के जल में अपने चरण रखे, भरत ने शंख-ध्वनि की, शत्रुघ्न ने कपूर की आरती की, ब्राह्मण सामवेद का गान करने लगे, मंगलवाद्यों से सारी दिशाएँ गूंज उठीं। भरत और

शत्रुघ्न भी नदी में उतरकर रामचन्द्रजी के दोनों तरफ़ खड़े हो गये ।

रामचन्द्रजी धीरे से नदी में चलते गहराई तक पहुँचे, वहाँ पर निश्चल खड़े हो गये । अपना दायाँ हाथ उठाकर हथेली से अभयमुद्रा बनाकर प्रजा को आशीर्वाद देते हुए बोले–"आप लोग प्रसन्नतापूर्वक घर लौटिये । सुख एवं संतोष के साथ रहिए ।"

लोग सरयू तट पर दूर तक मूर्तियों की भांति खड़े हो देखते रह गये । कुश-लवों के समीप खड़े हुए हनुमान व्यथा के मारे परेशान हो चिल्ला उठे–"रामचन्द्रजी, रुक जाइये! आप से पहले मैं ही नदी में अपनी देह त्याग दूंगा! आप के बिना मैं जीवित क्यों रहूँ?" यों छाती पीटते हनुमान नदी में उतरने लगे, इस पर रामचन्द्रजी हनुमान को रोकते हुए बोले– "हनुमान, तुम चिरंजीवी हो! क्या तुम मेरी सलाह भूल गये? तुम कुश-लवों को साथ लेकर शीघ्र यहाँ से चले जाओ ।"

रामचन्द्रजी का आदेश पाकर हनुमान कुश-लवों को साथ ले लौट गये ।

रामचन्द्रजी सरयू में जाकर अदृश्य हो गये । उनके पीछे भरत और और शत्रुघ्न भी नदी में विलीन हो गये । इस प्रकार रामावतार समाप्त हो गया ।

उधर क्षीर सागर में लक्ष्मण पहले ही आदि शेष का रूप धरकर शय्या बने हुए थे । रसातल से सीताजी लक्ष्मी के रूप में अवतरित हो आ पहुँचीं और शय्या पर बैठे रामचन्द्रजी की प्रतीक्षा कर रही थीं । श्रीरामचन्द्रजी विष्णु के रूप में शेष शय्या पर विराजमान हो गये । भरत और शत्रुघ्न शंख और चक्र के रूप में उनके हाथों में आ गये । लक्ष्मी देवी विष्णु के चरण दबाने लगीं ।

* * *

एक दिन कुश और लव सिंहासन पर बैठे अपने माता-पिता का स्मरण कर फूट-फूटकर रो रहे थे, इसे देख हनुमान उन्हें

सांत्वना देते हुए बोले–"रघुवंश की ज्योति बने आप लोगों को अद्‌भुत ढंग से शासन करना होगा, इस प्रकार चिंतित होना आप के लिए शोभा नहीं देता। जब भी आप लोग अपने माता-पिता को देखना चाहेंगे, तब मैं आप को उनके दर्शन कराऊँगा। देखिये, वे मेरे हृदय में किस प्रकार प्रसन्न चित्त हो विराजमान हैं।" इन शब्दों के साथ हनुमान ने अपना वक्ष फाड़कर दिखाया। हनुमान के हृदय में मंदहास और प्रेम पूर्ण दृष्टि प्रसारित करते आशीर्वाद देनेवाले अपने माता-पिता को देख कुश-लव परम आनंदित हुए।

अब तक कुश-लव जवान हो चुके थे। वे बड़ी दक्षता के साथ शासन का भार संभाल रहे थे। वे पूर्वी दिशा में मणिपुर को तथा पश्चिमी दिशा में मथुरा नगर को अपनी उप राजधानियाँ बनाकर शुभा के साथ कुश मणिपुर में तथा शोभा के साथ लव मथुरा में बड़ी निपुणता के साथ राज्य शासन करने लगे।

इस बीच देश पर बड़ी विपत्ति आई। राक्षस से भी अधिक क्रूर स्वभाव का नर रूप राक्षस घोर कलि शक, कुशान तथा पाषाण नामक पहाड़ी जाति के दुष्टों को इकट्ठा कर वायव्य दिशा से उनके राज्य पर टूट पड़ा। उसकी सेना पश्चिमोत्तर राज्य के भीतर हलचल मचाने लगी। उधर पश्चिमी दिशा में काल कलि नामक एक और नर रूप राक्षस विशाल नौका दल के साथ कालकेय नामक समुद्री सेना लेकर टूट पड़ा। कालकलि के आदेशानुसार कालकेय राज्य को लूटते अपार धन-धान्य को अपनी निवास भूमि कालकूट द्वीप में पहुँचाने लगे।

जनता भयभीत हो अपने धन और प्राणों की रक्षा का मार्ग ढूँढ़ने लगी। उस वक़्त हनुमान ने जनता के बीच प्रवेश करके समझाया–"आप लोगों को केवल अपनी आत्मरक्षा करना उचित नहीं है, सब लोगों को एक होकर देश की रक्षा करनी है।

रामचन्द्रजी द्वारा शासित राम राज्य में सारा देश रामसेना के रूप में तैयार हो जाय तो ऐसा कोई कार्य न होगा जिसे साधा नहीं जा सकता हो! हमें किसी प्रकार का उपद्रव तथा भय न होगा!" यों उन्हें समझाकर शत्रु का सामना करने के लिए उन्हें उत्तेजित किया। इस पर देश की सारी जनता योद्धाओं के रूप में हनुमान के नेतृत्व में घोरकलि तथा कालकलि के साथ युद्ध में जूझ पड़ी। उस वक़्त हनुमान दोनों युद्ध क्षेत्रों में सहस्त्र रूपों में सर्वत्र दिखाई देते हुए सहस्त्र रूपांजनेय कहलाये।

कुश ने बड़ी कुशलतापूर्वक युद्ध करके घोर कलि को अपने आग्नेयास्त्र से मार डाला। इस पर रामसेना ने उसकी सेना को मार भगाया। दुष्टों का संहार किया।

लव ने कालकलि के साथ युद्ध करके वारुणास्त्र से उसका संहार किया। रामसेना ने कालकेय राक्षसों को मटियामेट किया। हनुमान अपनी पूंछ से नौकाओं को लपेट कर समुद्र में डुबो दिया। इस प्रकार कालकेय का भी अंत हो गया।

एक साथ दो क्षेत्रों में विजय प्राप्त करनेवाली जनता से हनुमान बोले– "रामचन्द्रजी ने जिस पृथ्वी पर शासन किया, उस भूमि का प्रत्येक नागरिक कुश-लव का सहोदर है। सभी लोग समान रूप से व्यवहार करते रामसेना के रूप में बने रहिए। अगर किसी को कोई कष्ट हुआ तो उसे सब का मानकर दूर कीजिए, यही सच्ची देश भक्ति है!"

इसके उपरांत विजय की स्मृति में हनुमान का प्रोत्साहन पाकर कुश ने अपने नाम पर कुशावती नगर तथा लव ने अपने नाम पर लावंतिका नामक नगर का निर्माण किया।

अब लव-कुश समर्थता पूर्वक शासन कर रहे थे। उनके बल और पराक्रम पर हनुमान का विश्वास जम गया। वे रामराज्य के यश को बढ़ाते राज्य का शासन करने लगे, इस पर हनुमान को
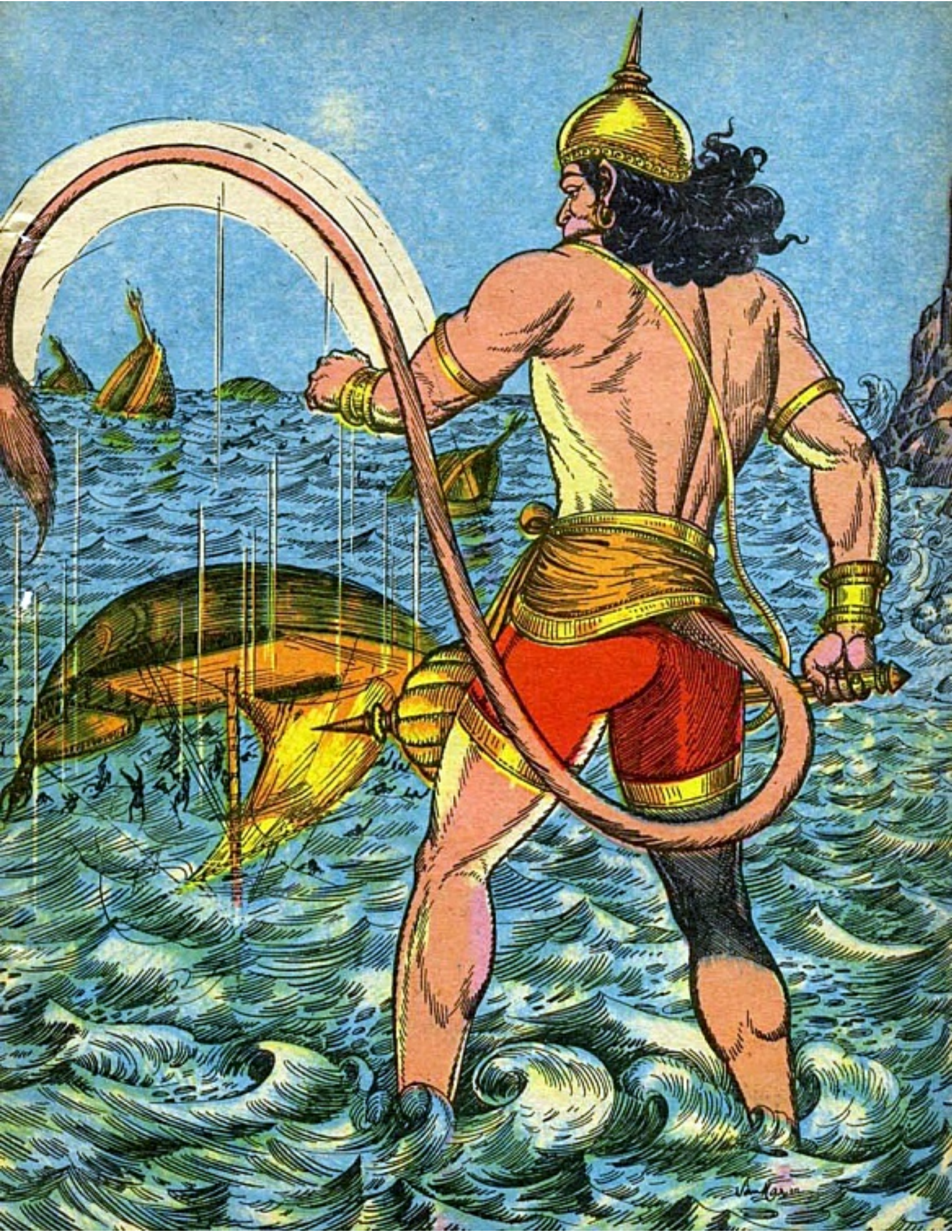
बड़ा आनंद हुआ। इस प्रकार आश्वस्त हो हनुमान ने कुश-लवों को बताया कि वे गंधमादन पर्वत पर जाना चाहते हैं।

कुश-लवों ने बड़ी धूम-धाम से हनुमान को गंधमादन पर्वत पर पहुँचा दिया।

हनुमान ने कुश-लवों को आशीर्वाद दिया– "तुम दोनों चिरकाल तक रघुवंश का यश क़ायम रखते हुए जीवित रहो!" इसके बाद जनता के समूह को लक्ष्य करके बोले–"रामसेना के रूप में सारा देश एक हो कार्य करे तो इस जगत में कोई असंभव कार्य न होगा! रामराज्य के सभी मानव लव-कुश ही हैं?" इन शब्दों के साथ हनुमान ने सब को अयोध्या लौट जाने को कहा।

जनता ने हनुमान को प्रणाम कर हाथ उठाकर जयनाद किये–"जय वीर हनुमान की!" इसपर हनुमान तप करने के लिए गंधमादन पर्वत पर चले गये।

कुश-लव तथा उनकी संतान ने रामराज्य और रघुवंश की प्रतिष्ठा का विस्तार करते हुए चिरकाल तक शासन किया। हनुमान गंधमादन पर्वत पर राम नाम का जाप करते तपस्या में लीन हो गये!

* * *

इस प्रकार गंधमादन पर्वत पर तपस्या में लीन हनुमान जी का एक बार अचानक ध्यान भंग हुआ, उन्होंने आँखें खोलकर देखा। उन्हें पर्वत छोटे दिखाई दिये, महा वृक्ष पौधों के रूप में और हाथी चूहे जैसे प्रतीत हुए। उन्होंने आसमान की ओर देखा। सप्तर्षि मण्डल ध्रुव नक्षत्र से दूर हट गया था। इसके आधार पर हनुमान ने सोचा कि युग-परिवर्तन हो गया है।

इसी समय त्रिकालज्ञ नारद ने प्रवेश करके बताया–"इस वक़्त द्वापर युग प्रथम चरण में है। हनुमानजी, इस द्वापर युग के चौथे चरण में आप को रामचन्द्रजी के दर्शन होंगे।" यों कहकर नारद मुनि चले गये।

हनुमान पुनः अपनी तपस्या में निर्विकार भाव से लीन हो गये।

दक्ष यज्ञ

प्राचीन काल में प्रजापतियों में से एक दक्ष ने आदि शक्ति की आराधना करके उनसे प्रार्थना की कि वह उसकी पुत्री के रूप में जन्म धारण करे। आदि शक्ति ने अपनी सम्मति दी और दक्ष की पचास पुत्रियों में से एक बनकर पैदा हुई।

उनका नाम सती था। दक्ष को पता न था कि सती महाशक्ति का अवतार है। वह सदा तप किया करती थीं।

जब वह युक्त वयस्का हुई, तब उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि वह शिवजी को छोड़ दूसरे के साथ विवाह न करेंगी। इस पर दक्ष ने आपत्ति उठाई। मगर देवताओं ने दख़ल देकर शिवजी और सती का विवाह किया। इस पर सती शिवजी के साथ कैलास में चली गईं।
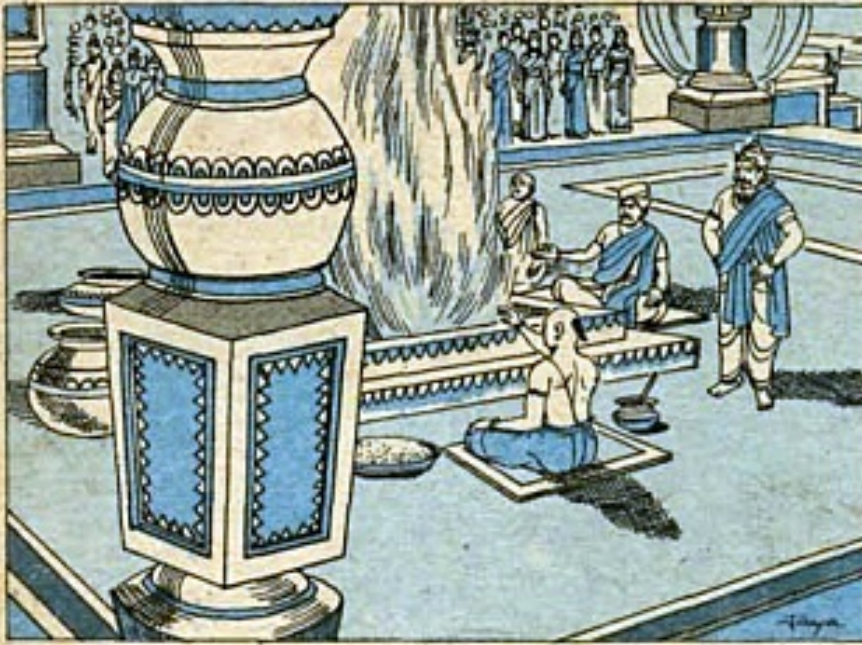
इसके थोड़े दिन बाद दक्ष ने एक महायज्ञ का संकल्प किया, उसमें अपनी सभी पुत्रियों तथा जामाताओं को निमंत्रित किया, मगर शिवजी तथा सती को निमंत्रण नहीं दिया ।

कैलास में स्थित सती को अपने पिता के यज्ञ का समाचार मालूम हुआ, उन्होंने उस यज्ञ में भाग लेना चाहा । इस पर शिवजी ने पूछा–"तुम्हें किसने निमंत्रण दिया है ?" सती ने समझाया–"अपने पिता के घर जाने के लिए निमंत्रण की क्या आवश्यकता है?"

आख़िर शिवजी की अनुमति पाकर सती दक्ष के घर पहुँचीं । सती की तपस्विनी का वेष देख दक्ष क्रोध में आया और शिवजी की निंदा की । सती अपने पिता का मुंह बंद न कर पाईं ।

अपने पति की निंदा न सुन पा सकने के कारण सती ने अपने प्राण त्याग दिये। सती के साथ आये हुए प्रमथों ने यह समाचार शिवजी को दिया। शिवजी उठ खड़े हुए, अपनी जटा को उखाड़कर क्रोधावेश में उसे जमीन पर दे मारा।

दूसरे ही क्षण असंख्य प्रेत और पिशाच पैदा हुए। दक्ष की यज्ञ वाटिका में जाकर प्रेत-पिशाचों ने उसे ध्वंस किया। फिर क्या था, यज्ञ का स्थान श्मशान के रूप में बदल गया।

इसके बाद शिवजी ने प्रवेश करके सती के शव को अपने हाथों में उठाया और वे प्रलय तांडव कर उठे। इस पर सारे लोक कांप उठे।
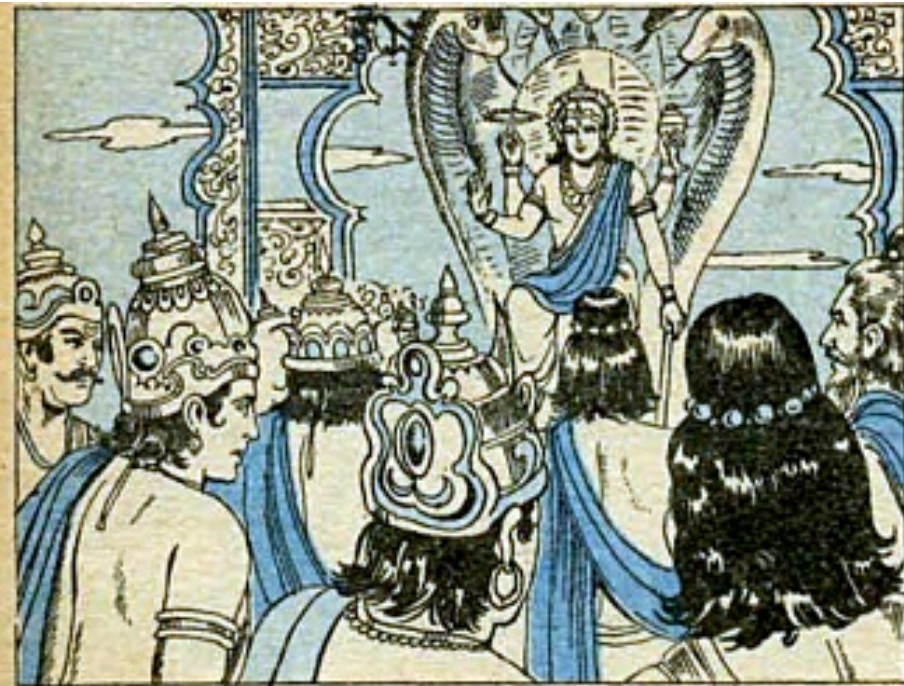
इसे देख देवता भयभीत हो गये। शिवजी के प्रलय तांडव को रोकने की श्री महाविष्णु से उन लोगों ने प्रार्थना की। विष्णु ने सुदर्शन चक्र का प्रयोग किया।

विष्णु चक्र ने सती के शव को टुकड़ों में काट दिया। वे टुकड़े सारे भारत में ५२ स्थानों में बिखरकर गिर गये। इस पर धीरे-धीरे शिवजी शांत हो गये।
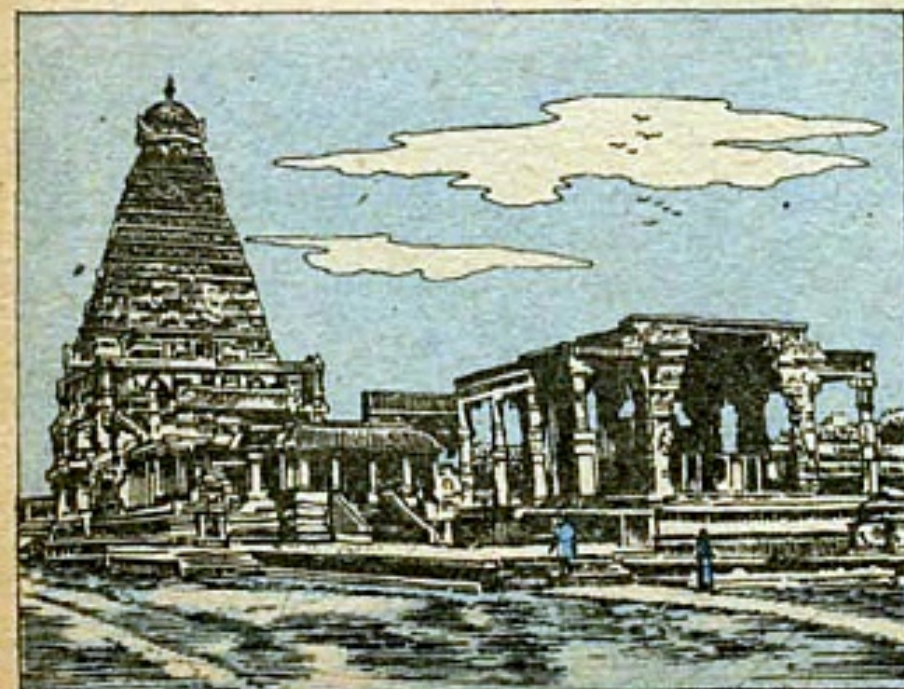
सती के शरीर के खंड जिन स्थानों में गिरे, वे पुण्य तीर्थ बन गये। हिन्दू यह सोचकर उन प्रदेशों की पूजा करते हैं कि आदि शक्ति के शरीर के टुकड़ों के कारण वे प्रदेश पवित्र हो गये हैं।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक व्यापारी ने सुना था कि महान पापी होते हुए भी मरते वक्त अजामिल ने अपने पुत्र को "नारायण!" पुकारा था, इस कारण उसे मुक्ति मिल गई है। इसलिए उसने अपने आठों पुत्रों के नाम विष्णु के ही विभिन्न नाम रखे थे। उसने व्यापार में अनेक प्रकार के पाप किये थे, इसलिए उसने अपने अंतिम दिन निकट आया जानकर अपने चार पुत्रों को व्यापार की देखभाल करने नियुक्त किया और बाक़ी चार पुत्रों को अपनी चारपाई के निकट रहने का आदेश दिया।

व्यापारी के अंतिम क्षण निकट आये, यह जानकर उसके आठों पुत्र चारपाई के समीप आ पहुँचे, इसे देख व्यापारी ने डांटा—"तुम सब यहीं आ गये? दूकान के पास कोई न रहे तो क्या माल की चोरी न होगी? चोर! चोर!" चिल्लाते उसने प्राण त्याग दिये। फलतः वह अगले जन्म में एक चोर के रूप में पैदा हुआ।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें—"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें जुलाई १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के सितंबर '७८ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

अप्रैल मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "समझ का फेर"

पुरस्कृत व्यक्ति: भूपेश गुप्ता, टी. एफ़. ३७/३ नाभा एस्टेट, शिमला (हि. प्र.)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां सितंबर १९७८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।
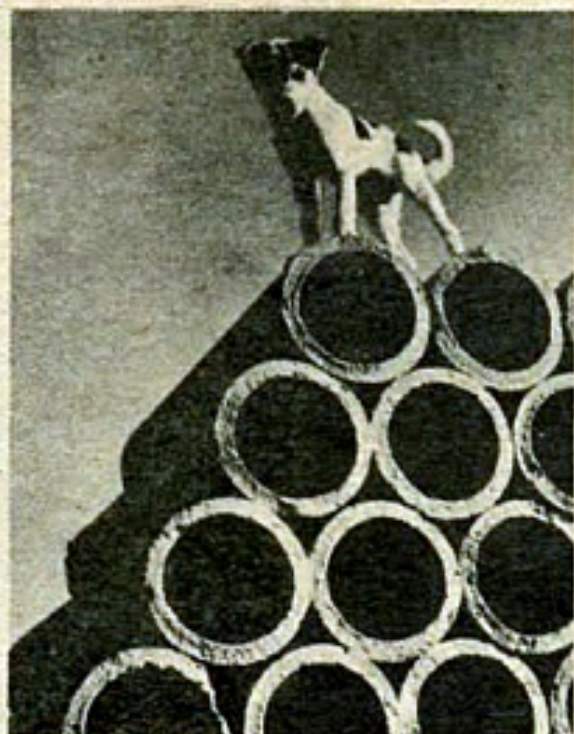
C. K. Sathyaraj

★

A. L. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मे के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : एक की बात !

द्वितीय फोटो : दूसरे के हाथ !!

प्रेषक : किशोर गायकवाड़, क्वार्टर नं. १८ बी., स्ट्रीट नं. ८, सेक्टर-१, भिलाई (म. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

‘चित्रा’ का निधन

जन्म : १२ मार्च १९१२

मृत्यु : ६ मई १९७८

चन्दामामा के प्रारंभ से लेकर चन्दामामा के प्रधान चित्रकार का दायित्व वहन करते हुए भारत के लाखों लोगों के प्रिय पात्र बने ‘चित्रा’ की मृत्यु का समाचार देते हुए हमें अपार दुख हो रहा है।

‘चित्रा’ का वास्तविक नाम श्री टी. वी. राघवुलु है। वे मद्रास के तेलुगु भाषी हैं। उनका जन्म मद्रास नगर के चूलै मुहल्ले में हुआ था। उन्होंने एस. एस. एल. सी तक शिक्षा प्राप्त की। १९४२ में उनका विवाह हुआ। उस वक्त वे ए. आर. पी के वार्डन थे। १९४७ जून २ तारीख़ को उन्होंने चन्दामामा में प्रवेश किया। इसके पूर्व वे क्लैन एण्ड पेरेल में फोटोग्राफर तथा आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस में सेल्समेन तथा चित्रकार के रूप में रहे थे। ‘चित्रा’ चित्रकारी में प्रशिक्षण प्राप्त कलाकार नहीं, वे अपने ही प्रयास से चित्रकार बने। वे फोटोग्राफी में बड़े ही दक्ष थे। उनके फोटोग्राफों को विदेशों के भी पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। चन्दामामा में प्रकाशित चित्रों के शिल्प की सृष्टि करनेवाले कलाकार चित्रा हैं। उनके लगभग दस हज़ार चित्र अब तक चन्दामामा में प्रकाशित हो चुके हैं।

‘चित्रा’ के निधन से चन्दामामा की अपार क्षति हुई है, यह बात हमारे पाठक स्वयं अनुभव कर सकते हैं। श्री चक्रपाणी के स्वर्गवास के पश्चात चित्रा का निधन हमारे लिए कभी पूरी न होनेवाली क्षति है। आज तक चन्दामामा के चित्रकारों को देखने आनेवालों की संख्या हज़ारों में होगी। कोई यह कल्पना तक नहीं कर सकता कि चित्रा के एकलव्य शिष्य कितनी संख्या में हैं। उनके चित्रों का अनुकरण अनेक बच्चों की पत्रिकाओं में स्पष्ट पाया जाता है। हमारा विश्वास है कि बच्चों के मुखमण्डलों को प्रफुल्लित कराने के हेतु चित्रा ने जो ज्योति जलाई वह कभी बुझनेवाली नहीं है।

‘चित्रा’ की आत्मा की शांति के हेतु हम हार्दिक कामना करते हैं।

संचालक

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस

मद्रास - ६०० ०२६

'मुझे मिला स्वाद का ख़ज़ाना!'

गोल्ड स्पॉट–स्वाद की गवाही, मुस्कुराहट बन के आई

अमर चित्र कथा

इतिहास व पुराणों पर आधारित रंगीन चित्र कथाएँ बच्चों का मनोरंजन ही नहीं, चरित्र निर्माण भी करती हैं।

अब तक प्रकाशित हुई कुछ चित्र कथाएँ:

कृष्ण लीला	नल दमयन्ती
राम की कहानी	हरिश्चन्द्र
लव-कुश	महाभारत
पंचतंत्र	चाणक्य
जातक कथाएँ	छत्रपति शिवाजी
गीता	राणा प्रताप
हनुमान	पृथ्वीराज चौहान
शिव-पार्वती	कर्ण

१६० से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित।

सभी पुस्तक विक्रेताओं से उपलब्ध।

मूल्य प्रति पुस्तक रु. २.५०

वितरक

इंडिया बुक हाउस

कलकत्ता-१६, पटना-४

नई दिल्ली-१

सेन्ट्रल बुक डिस्ट्रिब्युटर्स, लखनऊ-१

मन चाहा तो भरपूर मनोरंजन !

रेडियो सिलोन

आकाशवाणी के कार्यक्रमों में सारे परिवार के लिए मनोरंजन चाहे तो 'रेडियो सिलोन' से बढ़कर दूसरा कोई नहीं है ! अंग्रेजी, हिन्दी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़ तथा मलयालम भाषाओं के कार्यक्रमों में साफ़ और स्पष्ट कार्यक्रम चाहें तो 'रेडियो सिलोन' सुनना ही पड़ेगा ! रेडियो के समस्त स्टेशनों को घुमाकर देखिए–जो स्टेशन साफ़ दिखाई देता है–वह निश्चय ही 'रेडियो सिलोन' है !

अंग्रेज़ी–प्रति दिन

0600 to 1000 hrs	15525 KHZ (19 मी)
	9720 KHZ (31 मी)
	6075 KHZ (49 मी)
1800 to 2300 hrs	15425 KHZ (19 मी)
	9720 KHZ (31 मी)
	7190 KHZ (41 मी)

हिन्दी–सोमवार से शनिवार तक

0600 to 1000 hrs	11800 KHZ (25 मी)
1200 to 1400 hrs	7190 KHZ (41 मी)
1900 to 2300 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	6075 KHZ (49 मी)

हिन्दी–केवल रविवार

0600 to 1400 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	7190 KHZ (41 मी)
1900 to 2300 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	6075 KHZ (49 मी)

तमिल–प्रति दिन

1630 to 1900 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	6075 KHZ (49 मी)

मलयालम–प्रति दिन

1530 to 1630 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	7190 KHZ (41 मी)
	6075 KHZ (49 मी)

तेलुगु–प्रति दिन

1430 to 1530 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	7190 KHZ (41 मी)

कन्नड़–प्रति दिन

1400 to 1430 hrs	11800 KHZ (25 मी)
	7190 KHZ (41 मी)

विदेशों में अपने व्यापार की वृद्धि चाहने वाले विज्ञापनदाता निम्न लिखित पते से संपर्क करें !

रेडियो अड्वर्टाइसिंग सर्विसिस

सिसिलकोर्ट
लैंव्ड्स डाउनी रोड,
बंबई - 400039
दूरभाष : 213046/7
ग्राम्स : RADONDA

30, फिफ़्त ट्रस्ट क्रास स्ट्रीट,
मंदवल्लिपाक्कम्
मद्रास - 600028
दूरभाष : 73736
ग्राम्स : RADONDA